कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

वर्ष 62 अंक : 03 पृष्ठ : 52 जनवरी 2016 मूल्यः ₹ 10

बालिका सशक्तीकरण

हमारे प्रकाशन

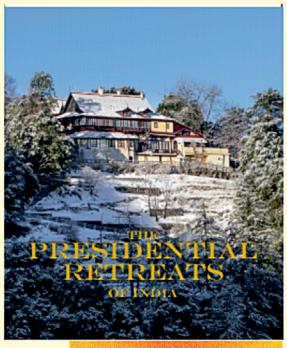

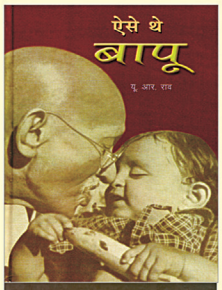

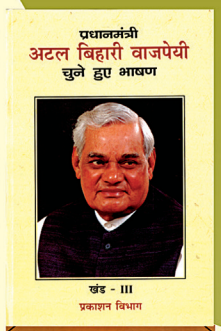

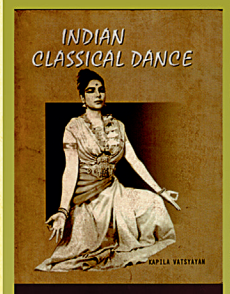

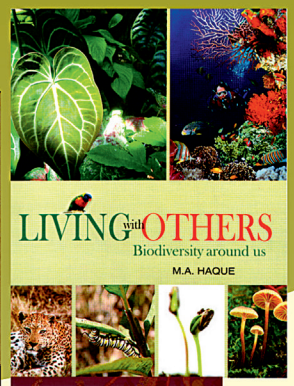

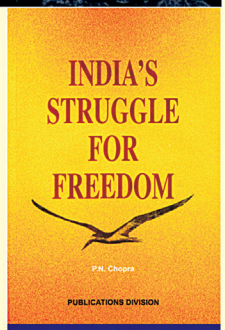

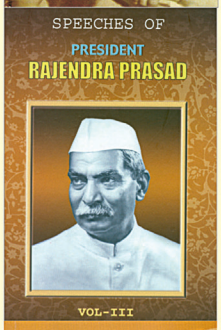

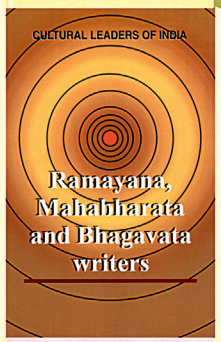

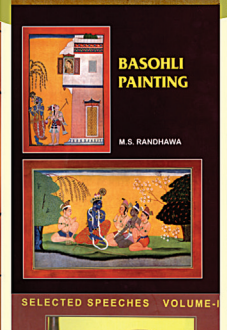

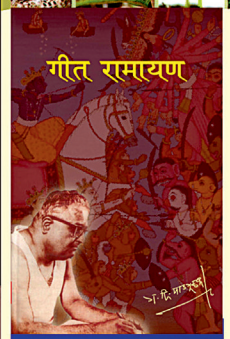

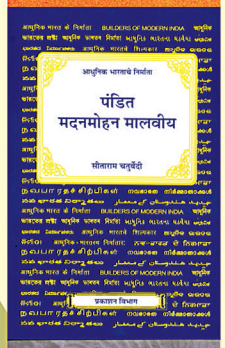

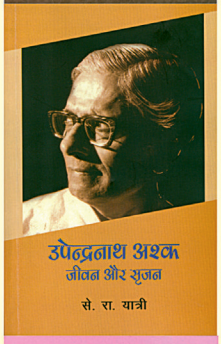

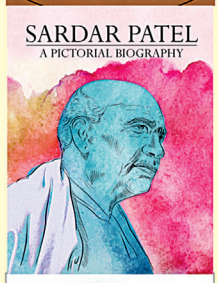

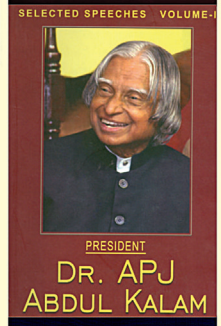

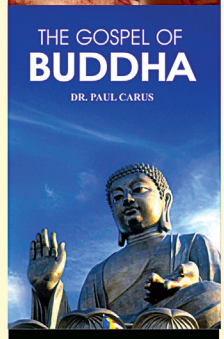

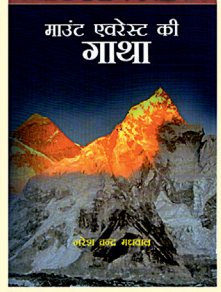

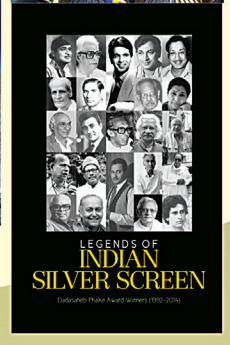

प्रकाशन विभाग
सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
सूचना भवन, सी जी ओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003
वेब साइट : **publicationsdivision.nic.in** फेसबुक : **www.facebook.com/publicationsdivision**

पुस्तकें मंगाने और व्यापारिक पूछताछ के लिए संपर्क करें –
टेलीफोन : 24365610, 24367260 फैक्स : 24365609, ई मेल : dpd@sb.nic.in, businesswing@gmail.com

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 62★ मासिक अंक : 03★ पृष्ठ : 52 ★पौष–माघ 1937★जनवरी 2016

प्रधान संपादक
दीपिका कच्छल
वरिष्ठ संपादक
कैलाश चन्द मीना
संपादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
वरिष्ठ संपादक,
कमरा नं. 655, प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स,
लोधी रोड, नई दिल्ली–110003
दूरभाष : 24365925
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक
विनोद कुमार मीना
व्यापार प्रबंधक
दूरभाष : 011–24367453
ई–मेल : pdjucir@gmail.com

आवरण
आशा सक्सेना
सज्जा
आशीष कण्ठवाल

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
सार्क देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

समग्र प्रयास से ही सुधरेगी बेटियों की दशा — जगन्नाथ कश्यप — 5

बालिका सशक्तीकरण हेतु योजनाओं का आकलन — ऋषभ कृष्ण सक्सेना — 10

शिक्षित बालिका से ही होगा सशक्त देश — अखिलेश आर्येन्दु — 15

बालिका सशक्तीकरण में बालिकाओं के स्वास्थ्य एवं पोषण का महत्व — डॉ संतोष जैन पासी एवं सुरिंद्रा जैन — 19

महिला सशक्तीकरण की बदलती तस्वीर — संजय श्रीवास्तव — 22

'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' बालिकाओं को सशक्त करने की अनूठी पहल — सोनी कुमारी — 28

स्वच्छता और बालिका सशक्तीकरण — अनुपमा जैन — 32

बालिका सशक्तीकरण : भ्रम और सत्य — अरुण तिवारी — 36

भारत में महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति — पश्यंती शुक्ला — 41

वन स्टॉप सेंटर स्कीम — विनीत तिवारी — 45

ग्रामीण महिलाओं को इंजीनियर बनाता एक कॉलेज — जय श्रीवास्तव — 47

अंजनी ने लड़ी शौचालय बनवाने के लिए लड़ाई — साधना यादव — 48

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से संपर्क करें। दूरभाष : 011–24367453

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पाठकों से आग्रह है कि कैरियर मार्गदर्शक किताबों/संस्थानों के बारे में विज्ञापनों में किए गए दावों की जांच कर ले। 'कुरुक्षेत्र' पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय–वस्तु के लिए उत्तरदायी नहीं है।

संपादकीय

एक सशक्त बालिका ही 'सशक्त' महिला बन अपने परिवार, समाज और राष्ट्र के निर्माण एवं उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसीलिए 'महिला सशक्तीकरण' की बात तब तक बेमानी है जब तक हम बालिकाओं के सशक्तीकरण के लिए संपूर्ण प्रयास नहीं करते।

जब हम बालिका सशक्तीकरण' की बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य बालिकाओं के समग्र विकास से है। बालिकाओं के समग्र विकास के लिए उन्हें उचित पोषण, स्वास्थ्य देखभाल और शिक्षा के अवसर के साथ–साथ जीवन के प्रत्येक स्तर पर बिना भेदभाव के पर्याप्त अवसर तथा संसाधन उपलब्ध हो, यह सुनिश्चित करना है।

भारत में बालिकाओं के साथ भेदभाव उनके जन्म से भी पहले शुरू हो जाता है। हमारे समाज में कन्या को गर्भ में ही मार देने का प्रचलन पुराने समय से है। चिकित्सा विज्ञान की प्रगति के साथ ही कन्या भ्रूण हत्या में भी लगातार वृद्धि होती चली गई। तकनीकी प्रगति के चलते जन्म–पूर्व लिंग निर्धारण संभव होने लगा और इससे कन्या भ्रूण हत्या के मामले बढ़ते चले गए।

भारत में जन्म से ही कन्याओं को 'बोझ' और 'पराया धन' समझा जाता है। दूसरी तरफ, बेटों का जन्म वंश का नाम आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक माना जाता है। एक तरफ बेटों के लिए मन्नतें मांगी जाती हैं तो दूसरी तरफ बेटी को गर्भ में ही मार दिया जाता है। बालिकाओं को वित्तीय बोझ के रूप में देखने वाले हमारे पैतृक समाज में रूढ़िवादी कुरीतियों के चलते लड़कियों का लड़कों के मुकाबले अनुपात कम हो रहा है और उनके साथ सामाजिक भेदभाव, बलात्कार, दहेज हत्या जैसे अपराध बढ़ रहे हैं।

कन्याओं के प्रति पक्षपात के कई रूप हैं–अपर्याप्त स्तनपान व अपर्याप्त भोजन से वे कुपोषण का शिकार होती हैं जबकि देखभाल में कमी और अनदेखी उन्हें भावनात्मक रूप से कमजोर कर देती है। परिवार में बालिकाओं के लिए स्वास्थ्य, पोषण, व्यक्तित्व विकास और शिक्षा आदि के लिए पर्याप्त संसाधन नहीं रखे जाते हैं। भ्रूण हत्या संभवतः महिलाओं के प्रति हिंसा का क्रूरतम रूप है जो उन्हें उनके आधारभूत और मौलिक अधिकारों से वंचित करता है। भारत में लगातार कम होता बाल लिंगानुपात समाज एवं सरकार दोनों के लिए गंभीर चिंता का विषय है। मानसिकता में बदलाव से ही इस पर रोक लगाना संभव है। बेटियों की संख्या में लगातार हो रही कमी एक गंभीर समस्या है जिसके खतरनाक परिणाम हो सकते हैं। ऐसे में कन्या भ्रूण हत्या को रोकना सरकार की सर्वोच्च प्राथमिकता है।

कन्या भ्रूण हत्या को रोकने, बेटियों को जन्म लेने का प्रकृतिप्रदत्त अधिकार देने और बेटियों का भविष्य बेहतर बनाने के उद्देश्य से प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 22 जनवरी, 2015 को हरियाणा की ऐतिहासिक भूमि पानीपत से "बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ" का राष्ट्रव्यापी अभियान शुरू किया। इस योजना का लक्ष्य कन्या भ्रूण हत्या रोकना एवं बाल लिंगानुपात में सुधार लाना और बालिका के महत्व तथा सशक्तीकरण में शिक्षा के महत्व को समझाने के लिए निरंतर प्रयास करना है। उम्मीद है कि यह योजना लड़कियों के प्रति समाज में सकारात्मक सोच पैदा करने में कामयाब होगी और उन्हें समान अधिकार एवं अवसर, उचित पालन–पोषण एवं समतुल्य शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराने में मददगार होगी। सरकार की सुकन्या समृद्धि योजना भी इसी कड़ी की एक अन्य महत्वाकांक्षी योजना है। यूं तो बालिकाओं के आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक सशक्तीकरण के लिए और भी कई योजनाएं चल रही हैं किंतु पर्याप्त फंड न होने के चलते इनका इतना लाभ नहीं पहुंच पाता जितना कि अपेक्षित है।

ऐसा नहीं है कि महिलाओं के लिए स्थितियां बदली नहीं हैं, लेकिन अभी भी इस दिशा में बहुत कुछ किया जाना शेष है। यूं तो ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत तेजी से बदलाव हो रहा है। आज एक तिहाई महिलाएं पंचायत प्रतिनिधि हैं जो महिला सशक्तीकरण के लिए 'परिवर्तन एजेंट' के रूप में काम कर सकती हैं। आज ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं की स्कूलों में नामांकन–दर तेजी से बढ़ रही है। लोगों की सोच में भी धीरे–धीरे बदलाव आ रहा है, जोकि एक सकारात्मक संकेत है। सवाल यह उठता है कि हम एक सशक्त ग्रामीण महिला को किस रूप में देखना चाहते हैं? जाहिर तौर पर "शिक्षित, आत्मनिर्भर और अपने निर्णय खुद लेने में समर्थ महिला के रूप में"। यह तभी संभव है जब वह शिक्षित हो। महिला सशक्तीकरण के लिए महिला के जीवन से जुड़े तीन प्रश्नों की अहम् भूमिका है –पहला, क्या उसे अपने जीवन से जुड़े निर्णय लेने की स्वतन्त्रता है? दूसरा, समानता और न्याय पर आधारित पुरुष जीवनसाथी के साथ सम्बन्ध व खुशहाल पारिवारिक जीवन और तीसरा, क्या वह सार्वजनिक गतिविधियों में भागीदारी कर पाती है? 'शिक्षा' एक महिला को उक्त तीनों चीजों को प्राप्य बनाती है। महिला शिक्षा के द्वारा ही सामाजिक व्यवस्था की जड़ों में जाकर उसमें निहित गड़बड़ी को दूर किया जा सकता है। सामाजिक न्याय व समानता के आदर्श का भी यह तकाजा है कि महिलाओं को इस योग्य बनाया जाए कि वह अपनी समस्याओं का समाधान खुद ढूंढ सकें और अपनी पसन्द की जिन्दगी जी सकें। यह सब कुछ महिला शिक्षा को बढ़ावा देकर ही संभव है क्योंकि शिक्षित महिला ही ऑनर–किलिंग, दहेज, यौन हिंसा, घरेलू हिंसा, कन्या भ्रूण हत्या आदि लैंगिक समस्याओं के खिलाफ संगठित होकर मुकाबला करने में सक्षम हो सकती है।

महिला शिक्षा का सकारात्मक प्रभाव देश की सकल राष्ट्रीय आय पर भी पड़ता है। एक शिक्षित महिला बखूबी जानती है कि धार्मिक धर्मकाण्डों, अंधविश्वासों व अन्य अनुत्पादक गतिविधियों पर व्यय की जगह बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य व परिवार आय उर्पाजन पर निवेश उचित है। स्पष्ट है कि महिलाओं के लिए शिक्षा हरेक तरह से फायदे की चीज है। देश में बालिका शिक्षा को बढ़ावा मिलने से उनके स्वास्थ्य, पोषण एवं जीवन–स्तर में भी वृद्धि आई है। आज महिलाएं विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों जैसे टीकाकरण, बाल टीकाकरण, परिवार नियोजन, गर्भनिरोधक प्रयोग, रक्ताल्पता निवारण हेतु फोलिक अम्ल गोलियां, आहार में फल–सब्जियों, दालों की खपत के प्रति जागरूक हैं। परिणामस्वरूप प्रजनन दर, शिशु मृत्यु दर, प्रसव दौरान मृत्युदरों में कमी आई है।

शहरी क्षेत्र ही नहीं ग्रामीण क्षेत्रों में भी महिलाएं बीमारियों से सुरक्षा, सफाई एवं गम्भीर बीमारियों के प्रति जागरूक हुई हैं। समाज के हर क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है। उनकी जागरुकता में वृद्धि आई है, उनका आत्मसम्मान बढ़ा है। उनकी कार्यपद्धति व सोच में बदलाव आया है, उनके निर्णय लेने की क्षमता में इजाफा हुआ है। यह सब हमारी नीतियों, कार्यक्रमों, कानूनों के क्रियान्वयन का परिणाम है। किन्तु यहां इस तत्थ का जिक्र करना आवश्यक है कि जिन स्थानों पर महिलाएं अशिक्षित हैं वहाँ की महिलाएं अभी भी रुढ़िवादिता एवं संशय के जंजाल में जकड़ी हुई हैं।

निसंदेह, केवल कानूनी व्यवस्था कर देने मात्र से ही महिलाएं अधिकार सम्पन्न नहीं हो सकती। संविधान की भावनाओं को व्यावहारिक बनाने के लिए अशिक्षित एवं ग्रामीण महिलाओं को शिक्षित कर सशक्त करने की जरूरत है। आज की बालिकाएं अगर शिक्षित होंगी तो भविष्य के लिए एक मजबूत नींव तैयार होगी। उन्हें शिक्षा, सहयोग और उन्नत सुरक्षित वातावरण उपलब्ध कराने की आवश्यकता है।

सभी पाठकों को नववर्ष 2016 की हार्दिक शुभकामनाएं

समग्र प्रयास से ही सुधरेगी बेटियों की दशा

—जगन्नाथ कश्यप

किसी भी समस्या के निराकरण हेतु हमें उसकी जड़ को पहचानना पड़ता है। आज यदि नवजात बच्ची से लेकर प्रौढ़ महिला तक को दोयम दर्जे का शिकार होना पड़ रहा है तो उसका कारण एक तरफ लोगों की संकीर्ण मानसिकता है तो वहीं दूसरी तरफ उनकी दयनीय आर्थिक स्थिति भी इसकी बराबर की जिम्मेदार है। अत: हमारे प्रयास दोनों ही दिशाओं में एक साथ होने चाहिए। बालिकाओं के विकास व शिक्षा में आने वाली आर्थिक बाधा को दूर करने वाली वैकल्पिक योजनाओं के साथ-साथ जनमानस के अंतर्मन से बालिकाओं व महिलाओं के लिए बनाई गई संकीर्ण अवधारणाओं की समाप्ति भी आवश्यक है। इसलिए हमें 'बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओ' एवं 'सुकन्या समृद्धि योजना' के साथ-साथ पूर्व की 'सशर्त नकद हस्तांतरण' योजनाओं का सरलीकरण कर, इनमें व्याप्त विसंगतियों को दूर कर कार्यान्वित करना होगा। सभी स्तरों पर बेहतर तालमेल व समग्र प्रयास के द्वारा ही देश में बेटियों की दशा सुधर पाएगी।

भारतीय संस्कृति एवं परंपरा में नारी नारायणी'', एवं ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः'' कहकर नारी को विशेष सम्मान दिया गया है और उसके महत्व को रेखांकित किया गया है। महिलाओं को दिए जाने वाले सम्मान व स्त्रियों के प्रति हमारी संस्कृति की आस्था व समर्पण भाव से हम सभी अवगत है। लेकिन इन आदर्शात्मक बातों से दूर धरातल की सच्चाई कुछ और ही स्थिति को बयां करती है। जन्म लेने के पूर्व से लेकर जन्म लेने, किशोरावस्था, व प्रौढ़ावस्था तक हर कदम पर भिन्न प्रकार की चुनौतियों से दो–चार होती इस देश की महिला आबादी अपने सह–अस्तित्व को लेकर संघर्षरत है। अतः हमें भी चाहिए कि कर्णप्रिय आदर्शात्मक पंक्तियों की दुनिया से बाहर निकल वास्तव में समाज में जो बालिकाओं व महिलाओं की दयनीय स्थिति है, उसे स्वीकार किया जाए तथा इससे मुक्ति पाने के रास्ते तलाशे जाएं।

'नारी तू नारायणी' की बात करने वाले इसी भारत देश में 1961 से लेकर अब तक बाल लिंग अनुपात जो 0 से 6 वर्ष की उम्र तक के प्रति एक हजार बालकों की तुलना में बालिकाओं की संख्या दर्शाता है, घटता जा रहा हैं और 2011 की जनगणना के अनुसार यह आंकड़ा 919 पर आ गिरा है। इस प्रकार बालिकाओं के घटते अनुपात दीर्घकाल में हमारे जनसांख्यकीय संरचना के लिए एक खतरनाक स्थिति का निर्माण कर सकते हैं। हमारे यहां पुरुष साक्षरता की तुलना में महिला साक्षरता लगभग 16% कम है (पुरुष साक्षरता–82.14% महिला साक्षरता 65.46%) सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय (MOSPI) की रिपोर्ट के अनुसार 63.5% लड़कियां बीच में ही स्कूली शिक्षा छोड़ देती हैं।

राष्ट्रीय पारिवारिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS) की तीसरी रिपोर्ट के अनुसार 47% किशोरावस्था (15–19 वर्ष की आयु वर्ग) बालिकाएं कम वजन की समस्या अर्थात जिनका बॉडी मास इंडेक्स 18.5 किग्रा से कम है, से ग्रसित हैं। और 56% किशोर बालिकाएं

एनीमिया की समस्या से ग्रसित हैं। भारत में लिंग भेद की भीषण स्थिति को इसी से समझा जा सकता है कि यू. एन. डी. पी. द्वारा जारी किये जाने वाले मानव विकास सूचकांक 2014 में भारत 188 देशों में 130वें स्थान पर था। रिपोर्ट के अनुसार यदि इसमें से पुरुषों को बाहर कर सिर्फ महिलाओं को रखा जाए तो भारत 151वें स्थान पर होता। उपरोक्त चंद आंकड़े यह दर्शाने के लिए काफी हैं कि जो देश तीव्र विकास करने व दहाई अंक की विकास दर को प्राप्त करने की नीतियां बनाने में व्यस्त हैं वहां की आधी आबादी किस प्रकार विकास से महरुम है।

कहते हैं कि किसी भी समस्या के निराकरण हेतु हमें उसकी जड़ को पहचानना पड़ता है। आज यदि नवजात बच्ची से लेकर प्रौढ़ महिला तक को दोयम दर्जे का शिकार होना पड़ रहा है तो उसका कारण एक तरफ लोगों की संकीर्ण मानसिकता है तो वहीं दूसरी तरफ उनकी दयनीय आर्थिक स्थिति भी इसकी बराबर की जिम्मेदार है। आज यदि किसी गरीब या फिर निम्न मध्यमवर्गीय परिवार की बात करें तो वह सदैव अपने सीमित आर्थिक संसाधनों के प्रयोग के लिए वरीयता अपने पुत्र को देगा, चाहे प्रश्न उसकी शिक्षा का हो या अन्य आवश्यकताओं का। बेटी को बोझ व पराया धन जैसे शब्दों से आज भी नवाजा जाता है, और जन्म के साथ ही परिवार खुद को बोझिल महसूस करने लगता है। यही कारण है कि समाज का एक बड़ा धड़ा तो तकनीकी का दुरुपयोग कर लिंग जानने और फिर कन्या भ्रूण हत्या जैसे जघन्य कुकृत्य को अंजाम देने में भी नहीं हिचकता। अतः हमारे प्रयास दो दिशाओं में एक साथ होने चाहिए–

- बालिकाओं के विकास व शिक्षा में आने वाली आर्थिक बाधा को दूर करने वाली वैकल्पिक योजनाएं
- लोगों के अंतर्मन से बालिकाओं व महिलाओं के लिए बनाई गई संकीर्ण अवधारणा की समाप्ति

हालांकि हमारी सरकारों द्वारा उपरोक्त दोनों हीं दिशाओं में कई प्रकार की योजनायें चलाई जाती रही हैं, केन्द्र व राज्य सरकारों की योजनाओं को मिलाकर देखा जाए तो अच्छी–खासी संख्या बन जाती है। परंतु ये सभी वांछित परिणाम क्यों नहीं दे पाए, इसका विश्लेषण भी हम आगे करने का प्रयास करेंगे। अब यदि वर्तमान केन्द्र सरकार की बात की जाए तो प्रधानमंत्री श्री मोदी की नेतृत्व वाली इस सरकार ने भी समाज में बालिकाओं की स्थिति सुधारने को लेकर अपनी प्रतिबद्धता जाहिर करते हुए एक नई योजना ''बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ'' को प्रारंभ किया है। बालिकाओं के अस्तित्व एवं सुरक्षा को सुनिश्चित करते हुए पक्षपाती लिंग चुनाव का उन्मूलन एवं बालिकाओं की शिक्षा को सुनिश्चित करना इस योजना के मुख्य उद्देश्य हैं। यह योजना महिला एवं बाल विकास मंत्रालय सहित परिवार कल्याण मंत्रालय एवं मानव संसाधन विकास मंत्रालय की संयुक्त पहल है। प्रथम चरण में इस योजना को निम्न बाल लिंग अनुपात वाले 100 जिलों में प्रारंभ किया गया है। तथा इनके चयन के तीन मानदंड हैं :–

- राष्ट्रीय औसत से कम बाल लिंग अनुपात वाले ऐसे 87 जिलों का चयन जोकि 23 अलग–अलग राज्यों से होंगे।
- आठ राज्यों से आठ जिलों का चयन जहां अनुपात तो राष्ट्रीय औसत के समान है परंतु बराबर गिरावट का रुख है।

- पांच राज्यों से पांच जिलों का चयन जहां बाल लिंग अनुपात राष्ट्रीय औसत से अधिक भी हो और जिन्होंने या तो अपने लिंगानुपात के स्तर को बनाए रखा अथवा उसमें बढ़ोतरी दर्ज की। इन जिलों के चयन का कारण यह है कि इनसे सीख लेकर बाकि जगहों पर इसे दोहराया जा सके।

निःसंदेह इस प्रकार के चयन की प्रक्रिया तार्किक व वैज्ञानिक लगती है। वहीं दूसरी तरफ यह योजना 'नकद हस्तांतरण' योजनाओं से अलग जन–जागरुकता अभियान के द्वारा बेटियों के संरक्षण, स्वास्थ्य एवं शिक्षा को सामाजिक आंदोलन का रूप देने की दिशा में प्रयासरत दिखती है। हालांकि इस योजना की क्या सीमाएं व चुनौतियां होंगी, इस पर भी हम आगे बात करेंगे।

क्या वित्तीय संसाधन बाधा बन सकते हैं इस नयी मुहिम में

'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' योजना के लिए वर्तमान वर्ष में 100 करोड़ रुपये का बजटीय आवंटन किया गया है। योजना के वृहद स्तर और प्रारूप को देखते हुए यह यक्ष प्रश्न है कि क्या यह राशि पर्याप्त होगी इसकी आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु। हमने पूर्व में भी देखा है अच्छी योजनाएं भी वित्तीय अभाव में बंद करनी पड़ती हैं। इसका एक अच्छा उदाहरण राजस्थान सरकार की 'राजलक्ष्मी' योजना है। अनुमानतः राजस्थान बालिकाओं की स्थिति सुधारने के लिए 'सशर्त नकद हस्तांतरण योजना' लाने वाला पहला राज्य था जिसने 1992 में 'राजलक्ष्मी' योजना प्रारंभ की भी, जिसे 1996 में पुनः कुछ नियमों को उदार कर प्रस्तुत किया गया था। यह कार्यक्रम राजस्थान सरकार एवं यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया (UTI) के तालमेल से तैयार किया गया था जिसमें पांच वर्ष से कम आयु की बच्ची के नाम राजस्थान सरकार द्वारा 1500 रुपये जमा किये जाते थे जो 21 वर्ष की लॉक–इन–अवधि के पश्चात 21000 रुपये के रूप में मिलते थे। यह योजना अच्छा कर रही थी और हरियाणा, कर्नाटक जैसे राज्यों ने इसी योजना का अनुसरण कर अपने यहां भी इस प्रकार की योजनाएं बनाईं। ''राजलक्ष्मी योजना'' में लाभार्थियों की संख्या वर्ष 1992–93 में 4917 से बढ़कर वर्ष 1997–98 में 11664 तक पहुंची थी, जो इसके शनैः शनैः सफल भी होने का संकेत देती है, परंतु बीच में ही वर्ष 2000 में वित्तीय संसाधन के अभाव में सरकार को इस योजना को बंद करना पड़ा था।

अतः इससे सीख लेते हुए हमारी सरकारों को किसी भी कल्याणकारी योजना को प्रारंभ करने से पहले आवश्यक वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता अवश्य सुनिश्चित करनी चाहिए।

इस बार के बजट को देखा जाए तो सरकार की कथनी एवं करनी में विरोधाभास दिखता है। वित्तीय वर्ष 2015–16 के लिए महिला एवं बाल विकास मंत्रालय को आवंटित राशि में पिछले वर्ष की तुलना में लगभग 50% की कटौती दिखती है। जहां वर्ष 2014–15 के बजट में नियोजित परिव्यय हेतु प्रस्तावित राशि 21100 करोड़ थी वहीं वर्ष 2015–16 के बजट में नियोजित परिव्यय की राशि घटाकर 10286.73 करोड़ कर दी गई है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के लिए आवंटन का सबसे बड़ा हिस्सा ''समेकित बाल विकास सेवा (ICDS) पर गया हैं यह राशि' 8477.77 करोड़ रुपये है। यह योजना एक अत्यंत ही वृहद योजना है जिसके अंतर्गत लगभग 7076 परियोजनाएं कार्यान्वित हो रही हैं। लगभग 14 लाख आंगनबाड़ी केन्द्रों के माध्यम से 0–6 वर्ष तक के बच्चों एवं गर्भवती महिलाओं को पूरक पोषक तत्त्व, बीमारियों से प्रतिरक्षा हेतु टीका इत्यादि के साथ–साथ नियमित स्वास्थ्य जांच की व्यवस्था होती है। इसके अतिरिक्त 0–6 वर्ष तक के बच्चों एवं बच्चियों को स्कूल–पूर्व की शिक्षा भी यहां से उपलब्ध कराई जाती है। इतने वृहद स्तर की परियोजना की राशि भी पिछले वित्तीय वर्ष की तुलना में आधी कर दी गई है, वहीं किशोरी बालिकाओं से संबंधित योजना जिसे ''सबला'' के नाम से भी जाना जाता है, के लिए महज 75.50 करोड़ रुपये आवंटित किये गए हैं। 11–18 वर्ष की किशोरावस्था बालिकाओं के विकास से संबंधित इस योजना को वर्ष 2010 में प्रारंभ किया गया था। यह वर्तमान में 205 जिलों में कार्यान्वित हो रही है। इस योजना के दो घटक हैं– पहला–पोषक तत्त्व व भोजन की उपलब्धता तथा दूसरा–स्वास्थ्य जांच, स्वास्थ्य संबंधी शिक्षा, परिवार कल्याण, सेक्युअल हेल्थ संबंधी विषयों पर मार्गदर्शन एवं परामर्श सहित व्यावसायिक शिक्षा आदि का प्रबंध। अगर उपरोक्त बिंदुओं को देखा जाए तो 'सबला' एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण योजना मालूम पड़ती है परंतु इसमें भी वित्तीय कटौती किया जाना यह सोचने पर विवश करता है कि कहीं यह कदम इस योजना के लक्ष्य को साधने में बाधा न बन जाए। इन केन्द्र प्रायोजित योजनाओं में हो रही वित्तीय कटौती का कारण केन्द्र सरकार द्वारा 14वें वित्त आयोग की अनुशंसा को मानते हुए केन्द्रीय करों में राज्यों की हिस्सेदारी को बढ़ाकर 42% कर देना हो सकता है, जिसके बाद केन्द्र सरकार केन्द्र प्रायोजित योजनाओं का युक्तिकरण कर रही है तथा कल्याणकारी योजनाओं को लेकर राज्य सरकारों को मुख्य भूमिका में आने की अपेक्षा कर रही है। खैर, यह कदम व सोच किस हद तक सफल होंगे यह तो भविष्य के गर्भ में है।

सशर्त नकद हस्तांतरण योजनाओं की स्थिति

हमने प्रारंभ में भी जिक्र किया था कि विभिन्न सरकारों द्वारा बालिकाओं के संरक्षण व विकास को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से नकद हस्तांतरण योजनाएं भी चलाई जाती रही हैं। वर्ष 2008 में भारत सरकार के महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा ''धनलक्ष्मी'' योजना को सात राज्यों के ग्यारह प्रखंडों में प्रारंभ किया गया। इस योजना के अंतर्गत 19 नवम्बर, 2008 के बाद जन्म लेने वाली

बालिका के लिए बीमा योजना की व्यवस्था थी तथा 18 वर्ष तक युवती के अविवाहित रहने पर, बीमा अवधि की समाप्ति के पश्चात एक लाख रुपये मिलते। इसके साथ ही बालिका के परिवार को और कई बिंदुओं की पूर्ति पर भी नकद हस्तांतरण का प्रावधान था। जैसे जन्म के समय पंजीकरण के पश्चात 5000 रुपये, फिर टीकाकरण के समय, प्राथमिक विद्यालय में दाखिले के समय, आठवीं तक स्कूली शिक्षा पूरी करने तक इत्यादि। हालांकि लक्ष्य को प्राप्त करने एवं आवंटित किये गए फंड के प्रयोग के आधार पर मूल्यांकन किया जाए तो यह योजना सफल साबित नहीं हुई। वर्ष 2008–09 के लिए लाभान्वित होने वाली बालिकाओं का लक्ष्य एक लाख था जबकि महज 79555 बालिकाएं ही पंजीकृत हुईं एवं आवंटित 10 करोड़ में से 5.95 करोड़ खर्च हो पाए। दूसरे वर्ष के लिए भी स्थिति असंतोषजनक ही रही।

इसी से मिलती–जुलती मध्य प्रदेश सरकार की योजना है 'लाडली लक्ष्मी योजना' जिसे मध्य प्रदेश सरकार द्वारा 2007 में प्रारंभ किया गया था जिसके अंतर्गत राज्य सरकार एक बच्ची के जन्म पर 6000 रुपये के राष्ट्रीय बचत पत्र में निवेश करती है। इससे मिलने वाली राशि बालिका के कक्षा छठी, नौवीं व ग्यारहवीं के शुल्क हेतु प्रयोग में आती है, तथा बची हुई राशि 21 वर्ष की आयु पर बालिका को मिल जाती है। इस प्रकार इससे शिक्षा व वित्तीय सुरक्षा दोनों लक्ष्य पूर्ण होते हैं। यह योजना काफी जनप्रिय हुई तथा अन्य कई राज्यों ने इसका अनुसरण भी किया। हां, कुछेक भ्रष्टाचार की समस्या तथा प्रक्रियात्मक जटिलता की शिकायतें जरूर आईं इसके संदर्भ में।

उपरोक्त दोनों उदाहरणों से स्पष्ट है कि इन नकद हस्तांतरण कार्यक्रमों से वांछित लाभ लेने के लिए हमें इनकी विसंगतियों को दुरुस्त करना होगा।

क्या है इनमें चुनौतियां

योजना आयोग के लिए तैयार की गई टी. वी. शेखर की समीक्षात्मक रिपोर्ट में देशभर में बालिकाओं के लिए चलाए जा रहे विशेष वित्तीय सहयोग संबंधी 15 योजनाओं का विस्तार से अध्ययन कर उनमें आने वाली चुनौतियां तथा विसंगतियां जिनकी वजह से हम इन योजनाओं से आशा अनुरूप परिणाम नहीं प्राप्त कर पा रहे, को चिन्हित किया गया है जिनमें कुछ निम्नलिखित हैं :–

- योजना की शर्तें – योजना की अनेक प्रकार की शर्तें तथा जटिल प्रक्रिया जैसे जन्म के साथ हीं पंजीकरण, इसके अलावा ज्यादातर योजनाओं के लिए एक या दो बालिका संतान का ही होना जनता में ऐसे कार्यक्रमों की जटिलता बढ़ाता है। इन योजनाओं का एक बड़ा नकारात्मक पक्ष यह रहा कि इन्हें परिवार नियोजन से जोड़ने का प्रयास किया गया है। कई योजनाओं में दंपत्ति के द्वारा नसबंदी या बंध्याकरण की शर्त ने भी योजना में नकारात्मक योगदान किया। कई योजनाओं में केवल बालिका संतान की आवश्यकता ने भी योजना की स्वीकार्यता को घटाया। अतः बालिका उत्थान से संबंधित योजना को परिवार नियोजन से जोड़ना गलत प्रयास था।
- ज्यादातर योजनाएं गरीबी रेखा से नीचे के लोगों तक ही सीमित रहीं। योजनाओं में बीपीएल परिवारों को ही भागीदारी देना भी सही कदम नहीं रहा क्योंकि यह समस्या केवल गरीब या गांव तक ही सीमित नहीं है।
- तालमेल का अभाव – योजना के कार्यान्वयन में विभिन्न विभागों के बीच समन्वय व तालमेल का अभाव भी एक बड़ी चुनौती है। इन योजनाओं का कार्यान्वयन वृहद तंत्र के द्वारा होता है जिसमें लाखों आंगनबाड़ी शामिल होते हैं। केन्द्र व राज्य सरकारों के बीच तालमेल, विभिन्न मंत्रालयों जैसे, शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला एवं बाल विकास इन सभी के बीच भी समन्वय की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त वित्तीय संस्थानों जैसे एल. आई. सी, बैंक इत्यादि से भी तालमेल की आवश्यकता होती है। इन सबके बिना योजनाओं का सफल संचालन नहीं हो सकता। वर्तमान सरकार द्वारा प्रारंभ की गई 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओं' योजना में भी सबसे बड़ी चुनौती तालमेल को लेकर ही आ सकती है।
- अवसंरचना का अभाव – टी. वी. शेखर की रिपोर्ट यह भी मानती है कि योजनाओं के कार्यान्वयन हेतु आवश्यक अवसंरचना के निर्माण के लिए अत्यंत कम राशि खर्च की जाती है तथा ज्यादातर योजनाएं आईसीडीएस के तंत्र का प्रयोग करती हैं जिससे इस पर दबाव बढ़ता है तथा ज्यादातर संदर्भों में पंचायतों, क्षेत्रीय एन. जी. ओ. एवं महिलाओं के स्वयंसहायता समूहों की अत्यंत सीमित भूमिका होती है जबकि इन सबकी विस्तृत व प्रबल भूमिका होनी चाहिए।

अतः अब यह स्पष्ट है कि 'नकद हस्तांतरण' से संबंधित ये योजनाएं अधिक प्रभावशाली हो सकती हैं बशर्ते इनका सरलीकरण कर, इनमें व्याप्त विसंगतियों को दूर कर इनको कार्यान्वित किया जाए।

इन योजनाओं का हमारी अर्थव्यवस्था पर एक अन्य सकारात्मक प्रभाव भी पड़ सकता है। सरकार द्वारा इन योजनाओं के लिए भिन्न प्रकार की बीमा पॉलिसी, राष्ट्रीय बचत–पत्रों, या बॉण्ड इत्यादि में निवेश करने से वित्तीय बाजार में पूंजी का अंतर प्रवाह होता है, जिससे वित्तीय संस्थानों की ऋण देने की क्षमता में वित्तीय बाजार में वृद्धि हो सकती है और इसके गुणक प्रभाव स्वरूप अर्थव्यवस्था में निवेश बढ़ जाएगा जिसका आर्थिक विकास की प्रक्रिया पर भी एक सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

महिला सशक्तीकरण के कानून और कार्यक्रम

महिला सशक्तीकरण हेतु संसद द्वारा महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण के लिए समय–समय पर कानूनों का प्रावधान किया गया है जिसमें समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम 1961, बाल विवाह निषेध अधिनियम 1976, वेश्यावृत्ति निवारण अधिनियम 1986, सती प्रथा निरोधक अधिनियम 1987, प्रसव–पूर्व निदान तकनीकी अधिनियम 1994, गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971, अनैतिक व्यापार निरोधक 1959 (1986 में संशोधन), घरेलू हिंसा रोकथाम अधिनियम 2005, हिन्दू उत्तराधिकार संशोधन अधिनियम 2005 आदि महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए बनाए गए।

केन्द्र सरकार द्वारा महिला सशक्तीकरण की दिशा में कई कार्यक्रमों एवं योजनाओं को भी चलाया गया है, जिसमें समेकित बाल विकास योजना 1975, स्वावलम्बन योजना 1982, महिला समाख्या योजना 1989, पुर्नउत्पादित एवं बाल स्वास्थ्य योजना 1997, बालिका समृद्धि योजना 1997, महिलाओं एवं बालिकाओं के लिए विश्रामगृह योजना 1999, किशोरी शक्ति योजना 2000, श्री शक्ति पुरस्कार योजना 2000, स्वधार योजना 2001, सर्व शिक्षा अभियान योजना 2001, जीवन भारती महिला सुरक्षा योजना 2003, कस्तूरबा गाधी विशेष बालिका विद्यालय योजना 2004, उज्जवला योजना 2005, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन योजना 2005, बालिका प्रोत्साहन योजना 2006, जननी सुरक्षा योजना 2006, इंदिरा गांधी इकलौती कन्या छात्रवृत्ति योजना 2006, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय निशक्तता पेंशन योजना 2007, प्रियदर्शनी परियोजना 2008, राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना 2008, समेकित बाल संरक्षण योजना 2009, इंदिरा गांधी मातृत्व सहयोग योजना 2010, सबला योजना 2012, कार्यरत महिला हॉस्टल योजना 2013, स्वयंसिद्धा योजना 2013 सम्मिलित हैं।

समाज के हर तबके को है जोड़ने की आवश्यकता

पुनः यदि मूल मुद्दे पर आएं तो हम पाएंगे कि ऐसा नहीं है कि बेटियों को लेकर उदासीनता महज आर्थिक रूप से विपन्न परिवारों में ही सीमित है, बल्कि निम्न मध्यमवर्गीय या मध्यमवर्गीय परिवार, जो भले ही आर्थिक रूप से ठीक हों, पर मानसिक अवधारणा यहां भी बेटियों को बोझ मानने की ही है।

अतः समाज के हर तबके को समान रूप से प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। और ऐसे वर्ग के लिए सरकार द्वारा लाई गई 'सुकन्या समृद्धि योजना' अत्यंत कारगर हो सकती है। इस योजना के तहत वर्तमान में सर्वाधिक 9.2% ब्याज दर का प्रावधान है, तथा इनमें निवेश का लाभ आयकर में धारा 80सी के तहत छूट के रूप में भी मिलेगा। इस योजना के तहत 10 वर्ष की उम्र तक की बच्ची का खाता खोला जा सकता है। यह खाता मात्र 1000 रुपये से खोला जा सकता है, तथा प्रति वर्ष न्यूनतम 1000 रुपये व अधिकतम 1,50,000 रुपये तक इस खाते में जमा किए जा सकते हैं। इसमें खाता खोलने से अगले 14 वर्ष तक प्रतिवर्ष राशि जमा करनी है। तथा खाता खोलने की तिथि से 21 वर्ष बाद यह परिपक्व होगा। हालांकि इससे पूर्व भी बालिका के 18 वर्ष पूरे हो जाने की स्थिति में उसकी शिक्षा या विवाह हेतु 50 प्रतिशत तक राशि निकाली जा सकती है। तथा विवाह हो जाने की स्थिति में खाते को बंद करना होगा।

इस योजना के दो महत्वपूर्ण आकर्षक पहलू हैं – पहला, इस पर वर्तमान में मिलने वाली सर्वाधिक ब्याज दर तथा दूसरा इसमें निवेश से मिलने वाली छूट। इस योजना के अंतर्गत जमा की गई राशि 80सी के तहत टैक्सेबल इनकम से डिडक्ट होगी (अधिकतम सीमा 1,50,000 तक) तथा इसमें मिलने वाले ब्याज व योजना के परिपक्व होने पर मिलने वाली राशि पर भी आयकर से छूट प्राप्त होगी। उपरोक्त दोनों हीं बिंदु सामान्य परिवारों को इस योजना में अपनी छोटी–मोटी बचत का निवेश करने को उत्प्रेरित करेंगी। तथा इससे उनके मन में बेटियों को लेकर जो तनाव व असुरक्षा का भाव रहता है, वो भी दूर होगा। हालांकि इस योजना के कुछ और बिंदुओं पर भी थोड़ा ध्यान दिया जाए तो यह और आकर्षक हो सकती है। जैसे इसकी परिपवक्ता अवधि (खाता खुलने से 21 वर्ष तक) काफी अधिक है, अन्य योजनाओं की तरह यह भी दो पुत्रियों तक ही सीमित है (तीन, यदि दूसरी बेटी के जन्म के समय जुड़वां बच्चियां हुईं), **अभी तो इसका ब्याज दर बाजार में अधिकतम है, परंतु भविष्य में इसको लेकर निश्चिंतता नहीं है। बेहतर होता यदि कोई न कोई न्यूनतम ब्याज दर भी तय कर दी जाती तो लोगों के मन में निश्चिंतता का भाव रहता।** खैर, ये सुधार आगे भी हो सकते हैं परंतु कुल मिलाकर यह एक अभिनव प्रयास है जिससे सकारात्मक प्रभाव की पूरी अपेक्षा है।

निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि आर्थिक सशक्तीकरण की दिशा में पहल के साथ ही जन–जागरण भी किया जाए तो निश्चित ही इस राष्ट्र में बेटियों की दशा सुधरेगी।

(लेखक सामाजिक–आर्थिक और सामाजिक–राजनीतिक मुद्दों पर विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में लिखते रहते हैं तथा दृष्टि करंट अफेयर्स टुडे की संपादक टीम में भी शामिल हैं।)
ई–मेलः jagannath.kashyap@gmail.com

बालिका सशक्तीकरण हेतु योजनाओं का आकलन

—ऋषभ कृष्ण सक्सेना

यह विडंबना ही है कि हमारे देश को आजादी मिले 68 वर्ष बीतने के बाद भी आधी आबादी कहलाने वाली महिलाओं की हालत को अब भी 'अच्छा' नहीं कहा जा सकता। ऐसा नहीं है कि सरकार इससे वाकिफ नहीं है। पिछली केंद्र सरकारों और राज्य सरकारों ने इस समस्या को दूर करने के लिए अपने स्तर पर विभिन्न योजनाएं चलाई हैं। लेकिन 2011 की जनगणना में लड़कियों की संख्या संबंधी आंकड़े बता रहे हैं कि इसमें बहुत ज्यादा सफलता हाथ नहीं लगी है। शायद इसीलिए पिछले साल केंद्र में आई राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार इस मोर्चे पर कुछ ज्यादा ही सक्रिय दिख रही है। उसने 'मिशन इंद्रधनुष' जैसी योजनाओं के जरिये नवजात कन्याओं के स्वास्थ्य के प्रति लोगों को गंभीर बनाने की कोशिश की है और आर्थिक कल्याण के लिए सुकन्या समृद्धि जैसी योजनाएं भी चलाई हैं। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी द्वारा आरंभ की गई 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' योजना लड़कियों की प्रगति में मील का पत्थर साबित हो सकती है और रोजगार की विभिन्न योजनाएं भी महिलाओं का सशक्तीकरण कर सकती हैं।

भारत बेहद तेजी से प्रगति कर रहा है। आर्थिक मोर्चे पर तो इसकी प्रगति की गवाही दुनिया भर के अर्थशास्त्री दे रहे हैं। लेकिन यह विडंबना ही है कि हमारे देश को आजादी मिले 68 वर्ष बीतने के बाद भी आधी आबादी कहलाने वाली महिलाओं की हालत को अब भी 'अच्छा' नहीं कहा जा सकता। महानगरों में अपने आसपास हम महिलाओं को बेहद सशक्त देखते हैं और वे पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर होड़ करती भी दिखती हैं। लेकिन छोटे शहरों, कस्बों या गांवों का रुख करते ही हालात एकदम उलट दिखाई देते हैं। वहां महिलाओं के पास न तो आर्थिक आजादी नजर आती है और न ही सामाजिक बंधनों से उन्हें मुक्ति मिलती है।

थॉमसन रॉयटर्स फाउंडेशन के कुछ महीने पहले आए सर्वेक्षण में जी–20 देशों में महिलाओं की स्थिति की पड़ताल की गई थी और भारत में महिलाएं सबसे बुरी स्थिति में पाई गईं। हद तो यह है कि सऊदी अरब जैसा रुढ़िवादी देश भी इस मामले में भारत से बेहतर निकला। विश्व आर्थिक मंच के लिंग भेद सूचकांक में भी भारत 135 देशों में 113वें स्थान पर दिखता है। रोजगार का मामला आता है तो यह भेद और भी ज्यादा दिखता है और गांव–शहर में कमोबेश हर जगह महिलाएं मोटे तौर पर दोयम दर्जे की ही मानी जाती हैं। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (एनएसएसओ) के 2011 में जारी आंकड़ों के मुताबिक गांवों में केवल 30 फीसदी महिलाओं को ही रोजगार मिला है और शहरों में तो यह आंकड़ा 20 फीसदी पर ही अटक गया।

आंकड़े तो ढेर सारे हैं, लेकिन अक्सर हम इस भेदभाव या पिछड़ेपन की मूल वजह और उससे निपटने के उपायों पर नजर डालने से परहेज करते हैं। इसकी मूल वजह जनगणना के आंकड़ों में बखूबी नजर आती है, जहां लड़कों के मुकाबले लड़कियों की संख्या लगातार घटती जा रही है। 1991 की जनगणना के आंकड़ों में प्रत्येक 1,000

लड़कों की तुलना में लड़कियों की संख्या 945 थी, लेकिन 2011 की जनगणना में आंकड़ा 918 पर ही ठहर गया। यह कोई छोटी समस्या नहीं है। इसके पीछे कन्या भ्रूण हत्या या लड़कियों के स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही जैसे चिंताजनक प्रचलन ही असली कारण हो सकते हैं। इससे निपटने का तरीका भी एक ही है लड़कियों को दोयम दर्जे का (और कुछ तबकों में बोझ) मानने की मानसिकता खत्म करना। ऐसा नहीं है कि सरकार इससे वाकिफ नहीं है। पिछली केंद्र सरकारों और राज्य सरकारों ने इस समस्या को दूर करने के लिए अपने स्तर पर विभिन्न योजनाएं चलाई हैं। लेकिन 2011 की जनगणना में लड़कियों की संख्या संबंधी आंकड़े बता रहे हैं कि इसमें बहुत ज्यादा सफलता हाथ नहीं लगी है। शायद इसीलिए पिछले साल केंद्र में आई राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) सरकार इस मोर्चे पर कुछ ज्यादा ही सक्रिय दिख रही है। उसने 'मिशन इंद्रधनुष' जैसी योजनाओं के जरिये नवजात कन्याओं के स्वास्थ्य के प्रति लोगों को गंभीर बनाने की कोशिश की है और आर्थिक कल्याण के लिए सुकन्या समृद्धि जैसी योजनाएं भी चलाई हैं। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी द्वारा आरंभ की गई 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' योजना लड़कियों की प्रगति में मील का पत्थर साबित हो सकती है और उनके रोजगार की विभिन्न योजनाएं भी महिलाओं का सशक्तीकरण कर सकती हैं।

केंद्र सरकार की इन योजनाओं को मोटे तौर पर तीन हिस्सों में बांटा जा सकता है:

- सामाजिक योजनाएं
- शैक्षिक योजनाएं
- आर्थिक योजनाएं

यूं तो केंद्र सरकार और राज्य सरकारों की ओर से दर्जनों योजनाएं चल रही हैं। लेकिन इन तीनों श्रेणियों में कुछ ही योजनाएं ऐसी हैं, जो व्यापक प्रभाव डालने वाली हैं।

सामाजिक योजनाएं– जन्म से लेकर उनके वयस्क होने तक लड़कियों के स्वास्थ्य और सर्वांगीण विकास के लिए सरकार कई योजनाएं चलाती है। नई सरकार ने एकीकृत बाल विकास योजना (आईसीडीएस) के तहत कन्याओं पर अधिक जोर देने के लिए कहा है और सभी बच्चों के अनिवार्य टीकाकरण के लिए आरंभ किए गए मिशन इंद्रधनुष में भी लड़कियों को विशेष रूप से शामिल किया जा रहा है ताकि उनके स्वास्थ्य के साथ किसी प्रकार का समझौता नहीं हो सके। आईसीडीएस इसमें खासतौर पर महत्वपूर्ण है। कुछ अन्य योजनाएं भी हैं, जो विशेष रूप से लड़कियों के सामाजिक उत्थाान के लिए ही बनाई गई हैं।

आईसीडीएस– बच्चों के स्वास्थ्य और संपूर्ण विकास के लिए दुनिया में आईसीडीएस से बड़ी संभवतः कोई और योजना नहीं है। यह योजना तो 1975 में शुरू की गई थी, लेकिन यूनिसेफ और विश्व स्वास्थ्य संगठन भी स्वीकार करते हैं कि बच्चों के लिए इतनी व्यापक योजना आज कहीं नहीं है। इस योजना में सभी कुछ शामिल है। इसमें औपचारिक स्कूली शिक्षा से पहले की शिक्षा पर ध्यान दिया जाता है और यह भी देखा जाता है कि बच्चे कुपोषण, बीमारियों और मानसिक क्षमता में कमी से ग्रस्त न हों। इसमें छह वर्ष तक के बच्चों के पोषण एवं स्वास्थ्य पर नजर रखी जाती है और उनके समुचित मानसिक तथा सामाजिक विकास की बुनियाद रखी जाती है। इसके अंतर्गत बच्चों को पूरक पोषण प्रदान किया जाता है, उनका टीकाकरण होता है, नियमित स्वास्थ्य जांच होती है और स्कूल से पहले उन्हें शिक्षा भी दी जाती है। इसे संचालित करने का जिम्मा आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं और चिकित्सा अधिकारियों का होता है। बच्चे आईसीडीएस के तहत साल में 300 दिन तक पूरक आहार प्राप्त कर सकते हैं। जो बच्चे गंभीर कुपोषणग्रस्त होते हैं, उन्हें विशेष पोषाहार पर रखा जाता है। लड़कियों के लिहाज से यह योजना खास महत्व वाली है क्योंकि आमतौर पर उन्हीं में कुपोषण या रक्ताल्पता की शिकायत अधिक देखी जाती है। लड़कियों को समाज के कई तबकों में नजरअंदाज कर दिया जाता है, जो उनके स्वास्थ्य और शिक्षा के लिहाज से खतरनाक हो सकता है। लेकिन सरकार की यह योजना उसकी भरपाई करने में सक्षम हो सकती है।

राजीव गांधी किशोरी सशक्तीकरण योजना (सबला)– आईसीडीएस के ढांचे का इस्तेमाल करते हुए 2010–11 में सरकार ने सबला योजना शुरू की, जो किशोरियों के लिहाज से बेहद अहम है। इस योजना को चलाने का जिम्मा राज्य सरकारों का है, लेकिन इसके लिए पूरी वित्तीय सहायता केंद्र सरकार की ओर से दी जाती है। इसका बड़ा मकसद किशोरियों को कुपोषण से बचाना है ताकि उनका सामाजिक और आर्थिक विकास हो सके तथा आने वाली पीढ़ियां भी स्वस्थ हों। इसके तहत 11 से 18 साल की सभी लड़कियों को पोषक आहार प्रदान कराया जाता है और 14 से 18 वर्ष की स्कूली लड़कियों पर खास जोर दिया जाता है। इसके तहत उन्हें पोषण, स्वास्थ्य, परिवार कल्याण, प्रजनन, बच्चों की देखरेख और जीवन–कौशल के बारे में जागरूक भी किया जाता है। जो लड़कियां शिक्षा से वंचित होती हैं, उन्हें औपचारिक शिक्षा के दायरे में लाने का प्रावधान भी इस योजना में है। 16 वर्ष या अधिक उम्र की लड़कियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाता है ताकि वे रोजगार के लायक बन सकें। स्वाभाविक तौर पर गरीब और वंचित तबकों की लड़कियों पर इसमें खास ध्यान दिया जा रहा है और एक करोड़ से भी ज्यादा लड़कियां इनका फायदा उठा रही हैं।

उज्ज्वला– अवैध मानव तस्करी दुनिया भर में बहुत बड़ी समस्या है और भारत भी इससे अछूता नहीं है। यहां लड़कियां

भी इसमें फंसी दिखती हैं। अक्सर पारिवारिक बाध्यताओं के कारण उन्हें बंधुआ मजदूर के तौर पर काम करते देखा जाता है और कई बार उन्हें जबरन काम भी करना पड़ता है। सबसे दयनीय हालत उनकी होती है, जिन्हें बांग्लादेश, नेपाल से और भारत के पिछड़े, गरीब तथा आदिवासी इलाकों से रोजगार के बहाने महानगरों में लाकर देह व्यापार में धकेल दिया जाता है। समस्या यह है कि ये लड़कियां अगर इससे मुक्ति पा लेती हैं तो भी समाज में उन्हें अपनाने वाले मुश्किल से मिलते हैं। इन्हीं के लिए सरकार ने दिसंबर, 2007 में उज्ज्वला योजना आरंभ की है। इसके तहत लड़कियों को देह व्यापार के चंगुल में फंसने से रोका जाता है। यदि वे फंस ही जाती हैं तो उन्हें वहां से मुक्ति दिलाई जाती है। उसके बाद उन्हें चिकित्सा और कानूनी सहायता प्रदान की जाती है तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण देकर उनका आर्थिक पुनर्वास किया जाता है। अंत में पीड़िता को उसके परिवार से मिला दिया जाता है और विदेश से लाई गई लड़कियों को उनके देश भेज दिया जाता है।

स्वाधार गृह– मुसीबत में फंसी लड़कियों और महिलाओं को आश्रय देने के लिए केंद्र सरकार की यह योजना पिछले 13 साल से चल रही है। इसमें बेसहारा महिलाएं तो शामिल होती ही हैं, वे लड़कियां भी होती हैं, जिन्हें वेश्यालयों या बालश्रम से मुक्त कराया जाता है और जिनके परिवार उन्हें वापस अपनाने से इंकार कर देते हैं। ऐसी लड़कियों को खतरे से बचाना और बेहतर जिंदगी दिलाना ही इस योजना का उद्देश्य है। इस योजना में लड़कियों को भोजन, आवास, कपड़े और चिकित्सा जैसी सुविधाएं तो मिलती ही हैं, उन्हें रोजगार कमाने के लायक बनाने के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण भी प्रदान किए जाते हैं। लेकिन इसके लिए लड़कियों की उम्र कम से कम 18 वर्ष होनी चाहिए। इस योजना के तहत प्रत्येक जिले में कम से कम एक स्वाधार गृह बनाए जाने का प्रावधान है, जिसमें 30 लड़कियां और महिलाएं हो सकती हैं। महानगरों में या 40 लाख से अधिक जनसंख्या वाले जिलों में जरूरत पड़ने पर एक से अधिक स्वाधार गृह बनाए जाने का प्रावधान है, जिनमें रहने वाली लड़कियों की संख्या 100 तक हो सकती है।

कितनी प्रभावी– सरकार की सामाजिक योजनाएं बेशक अपना असर दिखा रही हैं और उनसे लड़कियों के सामाजिक दर्जे में इजाफा भी हो रहा है। आईसीडीएस के कारण लड़कियों में भी कुपोषण की स्थिति कम हो रही है ओर सबला के जरिये उन्हें स्कूलों में भी पोषाहार मिल रहा है, जो उनके विकास में सहायक हो रहा है। इसके अलावा उच्च शिक्षा में लड़कियों का दखल भी इन योजनाओं के कारण ही बढ़ रहा है। लेकिन अभी इसमें काफी लंबा रास्ता तय करना है क्योंकि सामाजिक रवैये में तब्दीली ज्यादा अहम है। कई वर्गों में अब भी लड़कियों को दोयम दर्जे का ही माना जाता है और अध्ययन बताते हैं कि ऐसा केवल गरीब परिवारों या गांवों में नहीं है बल्कि संपन्न परिवार भी लड़कों और लड़कियों में भेद करते हैं। इस नजरिये को सुधारने के लिए सरकार को अलग रणनीतियां अपनानी होंगी।

इसी तरह लड़कियों को अक्सर पढ़ाई के साथ परिवार के कामों में भी हाथ बंटाना होता है, जिससे उनका व्यक्तित्व विकास बाधित होता है और उनकी शिक्षा तथा रोजगारपरकता पर भी असर पड़ता है। इसके लिए सरकार को उन परिवारों में जागरुकता का संचार करने की योजनाएं बनानी होंगी ताकि लड़कों की ही तरह लड़कियों को भी स्वास्थ्य और शिक्षा का समान अधिकार प्राप्त हो सके।

शैक्षिक योजनाएं– लड़कियों की शिक्षा के मामले में देश अब भी बहुत अच्छी स्थिति में नहीं है। इंडिया स्पेंड की पिछले दिनों आई रिपोर्ट के अनुसार 2012–13 में व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा तथा प्रशिक्षण के माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रमों में प्रवेश लेने वाले विद्यार्थियों में लड़कियों की संख्या केवल 7 फीसदी थी। इनमें भी ज्यादातर नर्सिंग और सिलाई जैसे हुनर सीखने में लगी थीं। शहरों में भी केवल 2.9 फीसदी लड़कियां तकनीकी शिक्षा ले रही थीं। इतना ही नहीं उच्च शिक्षा बीच में ही छोड़ने वाली लड़कियों की संख्या भी बहुत अधिक है और केरल तथा गुजरात जैसे समृद्ध कहलाने वाले राज्य भी इससे अछूते नहीं रहे हैं। इससे निपटने के लिए लड़कियों की शिक्षा के लिए अधिक से अधिक प्रयास करने आवश्यक हैं और इसके लिए केवल सर्व शिक्षा अभियान से काम नहीं चल सकता। केंद्र सरकार भी इस बात को समझ रही है, इसलिए कुछ विशेष योजनाओं पर काम चल रहा है।

'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' योजना– केंद्र सरकार की इस योजना में लड़कियों के सामाजिक और शैक्षिक उत्थान की रणनीति निहित है। घटते लिंगानुपात से निपटने के लिए सरकार ने इस योजना को आरंभ में 100 संवदेनशील जिलों में लागू किया है, जहां लिंगानुपात बहुत कम है। इसके तहत कुछ विशेष समुदायों या वर्गों में लड़कियों के प्रति पूर्वग्रह समाप्त करने और लड़कियों के जीवन, सुरक्षा तथा शिक्षा को सुनिश्चित करने पर जोर दिया जा रहा है। इसके तहत आईसीडीएस की सभी योजनाएं भी लड़कियों तक पहुंचाई जा रही हैं ताकि उनका समुचित विकास हो सके। इस योजना के लिए आरंभ में 100 करोड़ रुपये आवंटित किए गए। हालांकि यह योजना अभी शुरुआती चरण में है और इसका सही प्रभाव समझने में अभी समय लगेगा, लेकिन योजना ढेर सारी उम्मीदें जगा रही है।

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय– हालांकि देश में आरक्षण लागू हुए करीब ढाई दशक पूरा होने को है और अनुसूचित

जातियों तथा जनजातियों के विद्यार्थियों को शिक्षा के मामले में आरक्षण का लाभ मिल रहा है। लेकिन सामाजिक बुनावट और दूसरी रुढ़ियों के कारण इन वर्गों की लड़कियां कई बार शिक्षा से वंचित रह जाती हैं और कई बार उनके आसपास शिक्षा ग्रहण करने के साधन ही नहीं होते। उन्हें तथा अन्य पिछड़े एवं अल्पसंख्यक वर्गों की लड़कियों को ध्यान में रखते हुए यह योजना शुरू की गई है। इसमें उन इलाकों की लड़कियों को रिहायशी सुविधा के साथ शिक्षा मुहैया कराई जाती है, जिनके घरों के आसपास स्कूल नहीं होते। सरकार का मकसद है कि स्कूल की सुविधाएं दूर होने के कारण लड़कियां स्कूली शिक्षा छोड़ने का फैसला न करें और वंचित वर्गों की लड़कियों को शिक्षा से वंचित न रहना पड़े। इसके साथ ही इस योजना से शिक्षा की गुणवत्ता में भी इजाफा होता है। संबंधित सरकारी विभाग इसके लिए उन गांवों में जाते हैं, जहां लड़कियां शिक्षा प्राप्त करने की इच्छुक होती हैं, लेकिन उनके पास साधन नहीं होते। उनके माता–पिता को इस योजना की जानकारी लेकर लड़कियों को कस्तूरबा गांधी विद्यालय में प्रवेश दिला दिया जाता है, जहां वे छात्रावास में रहकर पढ़ाई करती हैं। इनमें दस वर्ष से अधिक उम्र की लड़कियों को ही प्रवेश दिया जाता है। इन विद्यालयों में 75 फीसदी सीटें अनुसूचित जाति/जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग और अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षित होती हैं। बाकी 25 फीसदी सीटों पर गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों की लड़कियों को प्रवेश मिलता है। सुविधाहीन लड़कियों को शिक्षित करने के लिहाज से यह बेहद महत्वपूर्ण योजना है।

कितनी प्रभावी– शिक्षा की तमाम योजनाएं अपना असर तो दिखा रही हैं और उनसे जागरुकता भी बढ़ती दिख रही है, लेकिन अभी बहुत काम किया जाना बाकी है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने शिक्षा की स्थिति पर 2013 में एक रिपोर्ट जारी की थी, जिसके मुताबिक देश में पांचवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त करने वालों की संख्या 2012–13 के दौरान करीब 23 लाख कम हो गई थी, जो चिंता की बात है। इसके बावजूद आठवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त कर रहे बच्चों की तादाद करीब 20 करोड़ बताई गई थी, जिसमें अब इजाफा ही हुआ होगा। इतनी बड़ी तादाद में बच्चों के लिए स्कूलों की सख्त कमी है, जिसका खमियाजा अक्सर लड़कियों को ज्यादा भुगतना पड़ता है। मंत्रालय की वेबसाइट यह भी बताती है कि करीब एक चौथाई स्कूलों में अभी तक शौचालय भी नहीं हैं। जाहिर है कि ग्रामीण इलाकों में यह देखकर माता–पिता लड़कियों को स्कूल जाने से रोक देते होंगे। बेशक प्रधानमंत्री जी के आह्वान पर स्कूलों में शौचालयों का निर्माण तेज किया जा रहा है, लेकिन अभी उसमें लंबा समय लगेगा।

शिक्षकों की कमी भी रही है क्योंकि आठवीं कक्षा तक करीब 50 विद्यार्थियों पर एक ही शिक्षक है। ऐसे में शिक्षा की गुणवत्ता पर असर पड़ना लाजिमी है। शिक्षकों को कई बार लैंगिक संवेदनशीलता भी नहीं सिखाई जाती है, जिसकी गाज लड़कियों पर गिरती है और उन्हें स्कूल जाने से वंचित होना पड़ता है।

इन सभी समस्याओं को देखते हुए सरकार को सबसे पहले स्कूलों का बुनियादी ढांचा दुरुस्त करना होगा। कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय में यदि ग्रामीण क्षेत्र की लड़कियों के लिए भी विशेष प्रबंध किए जाएं तो हालात काफी सुधर सकते हैं। इसके अलावा शिक्षकों की भर्ती के लिए विशेष अभियान चलाने होंगे और शिक्षकों को लड़कियों के प्रति संवेदनशील बनाने के लिए विशेष प्रशिक्षण भी प्रदान करना होगा। सर्व शिक्षा अभियान के तहत 2013 में ही कराए गए एक सर्वेक्षण में यह भी पता चला कि जिन राज्यों में लड़कियों को स्कूलों से साइकिल, स्वेटर आदि दिए जाते हैं, वहां स्कूलों में उनकी संख्या काफी बढ़ जाती है। सरकार इस तरह की प्रोत्साहन योजनाओं पर भी जोर दे सकती है।

आर्थिक योजनाएं– तमाम तरह की प्रगति हो जाने के बाद भी भारत के कई हिस्सों और समुदायों में लड़कियों के आर्थिक उत्थान के बारे में नहीं सोचा जाता। अब भी ढेरों परिवार ऐसे हैं, जहां लड़की के जन्म के बाद ही उसके विवाह की चिंता माता–पिता को सताने लगती है। ऐसे में वे उसे रोजगार हासिल करने के लायक प्रशिक्षण देने या आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के बारे में सोच ही नहीं पाते। बेशक देश में नौकरीपेशा लड़कियों और महिलाओं की संख्या बढ़ रही है, लेकिन अब भी यह प्रचलन आमतौर पर महानगरों या बड़े शहरों में ही देखा जा रहा है। छोटे शहरों में अभी तक लड़कियां अनौपचारिक रोजगार में ही जुटी दिखती हैं और विवाह के बाद अक्सर उसे भी छोड़ देती हैं। ऐसे में सुकन्या समृद्धि, धनलक्ष्मी, लाड़ली लक्ष्मी और स्टेप जैसी कुछ योजनाएं हैं, जो लड़कियों को आत्मनिर्भर बनाने में मददगार साबित हो सकती हैं।

सुकन्या समृद्धि– यूं तो भारत में विभिन्न प्रकार की नकद प्रोत्साहन योजनाएं चलती रही हैं और लड़कियों को बढ़ावा देने के लिए भी ऐसी योजनाएं चलाई गई हैं। लेकिन सरकार की सुकन्या समृद्धि इस मामले में सबसे महत्वाकांक्षी और विराट योजना है, जिसे हाथोहाथ लिया भी जा रहा है। इस योजना के तहत लड़की के जन्म से लेकर दस वर्ष के भीतर बैंकों और डाकघरों में सुकन्या समृद्धि खाता खोलना होता है। खाते में शुरुआती पांच साल तक सरकार हर साल 1,000 रुपये डालेगी। लड़की के माता–पिता को इसमें साल में कम से कम 1,000 रुपये डालने हैं और अधिकतम सीमा 1.50 लाख रुपये सालाना है। सरकार ने इस पर पिछले वित्तवर्ष में 9.1 फीसदी ब्याज देने का ऐलान किया था, जो इस साल बढ़ाकर 9.2 फीसदी कर दिया गया। योजना के तहत 14 साल तक लगातार रकम जमा की

जाएगी और उसके बाद 7 साल तक रकम नहीं डालनी है, लेकिन ब्याज जुड़ता रहेगा। 21 साल पूरे होने या विवाह होने पर रकम लड़की या उसके माता–पिता के सुपुर्द कर दी जाएगी। इस योजना के लिए लोगों को प्रोत्साहित करने के मकसद से सरकार ने इसे आयकर से पूरी तरह मुक्त रखा है और आयकर कानून की धारा 80 सी के तहत सालाना निवेश पर कर रियायत भी मिलती है। यह योजना वास्तव में बहुत फायदेमंद है और लड़कियों की उच्च शिक्षा तथा स्वरोजगार के लिहाज से रकम बहुत काम आ सकती है। इस योजना के फायदों का ही कमाल था कि शुरुआती दो महीनों में ही इसमें 15 लाख के लगभग खाते खुल गए थे।

स्टेप– भारत में 15 से 59 साल तक की उम्र यानी कामकाजी उम्र वाले 60 करोड़ से भी ज्यादा लोग रहते हैं, जो उसके लिए बहुत बड़ी फायदे की बात हो सकती है। लेकिन दिक्कत यह है कि ज्यादातर रोजगार के लिए जिस कौशल की जरूरत होती है, वह युवाओं के पास है ही नहीं। लड़कियों और महिलाओं के मामले में हालत और भी बदतर है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (एनएसएसओ) के आंकड़े बताते हैं कि 2004–05 में गांवों में 15 साल से अधिक उम्र की 33.3 फीसदी महिलाएं कामकाज में लगी थीं। लेकिन 2011–12 के सर्वेक्षण में आंकड़ा 25.3 फीसदी ही रह गया। शहरी इलाकों में आंकड़ा 16.6 फीसदी से घटकर 14.7 फीसदी रह गया। इसकी बहुत बड़ी वजह यही है कि रोजगार के मुताबिक कौशल लड़कियों और महिलाओं के पास नहीं होता है। इसके अलावा लड़कियों की शिक्षा पर कम ध्यान दिए जाने के कारण भी यह देखा जाता है। इससे निपटने के लिए ही सरकार ने ''स्टेप'' नाम का कार्यक्रम 1986–87 में शुरू किया था, जिसे अब पूरे देश में व्यापक तरीके से चलाया जा रहा है। केंद्र सरकार से वित्तीय सहायता प्राप्त इस योजना में लड़कियों के कौशल उन्नयन के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाते हैं। 2014 में इस योजना के नियमों में संशोधन किया गया और कई नए कौशल इसमें शामिल किए गए। योजना के तहत लड़कियों को रोजगार प्राप्त करने के लायक कौशल दिए जाते हैं और उन्हें स्वरोजगार प्राप्त करने या अपना उद्यम आरंभ करने के लायक बनाया जाता है। 16 साल या अधिक उम्र की लड़कियां ही इसमें शामिल हो सकती हैं। गैर–सरकारी संगठनों की मदद से चलाए जा रहे स्टेप प्रशिक्षण कार्यक्रमों में अधिकतम 200 लड़कियों और महिलाओं के बैच अधिक से अधिक 18 महीने के लिए चलाए जाते हैं। इसके प्रशिक्षण के बाद की गतिविधियों का आकलन भी किया जाता है। तीन या छह महीने के कार्यक्रम भी इसमें होते हैं। इस योजना के तहत पिछले वित्त वर्ष में 24,000 से अधिक लड़कियों और महिलाओं को प्रशिक्षण दिया गया था। 2013–14 में आंकड़ा 31,000 से अधिक था। हालांकि इनमें से कितनी लड़कियों को रोजगार हासिल हुआ है, इसके सरकारी आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

कितनी प्रभावी– लड़कियों के रोजगार के लिहाज से स्टेप विशेष और व्यापक योजना है, लेकिन उसके अलावा भी अल्पसंख्यकों के लिए नई रोशनी जैसी योजनाएं हैं और विभिन्न सामान्य रोजगार प्रशिक्षण योजनाएं भी हैं, जिनसे लड़कियां भी लाभान्वित होती हैं। लेकिन सबसे बड़ी समस्या यह है कि इन योजनाओं का समुचित प्रचार नहीं हो पाता है, जिसके कारण अक्सर वे लड़कियां ही इनका लाभ उठा पाती हैं, जो स्वयं आर्थिक रूप से सक्षम बनना चाहती हैं। उनके परिवार कई बार या तो इससे हिचकते हैं या इसके प्रति बेपरवाह रहते हैं। इसलिए सबसे पहले परिवारों को लड़कियों के आर्थिक स्वावलंबन की अहमियत और उसके लाभ बताना जरूरी है। उसके अलावा सरकार को इन कार्यक्रमों की निगरानी के भी समुचित प्रबंध करने होंगे क्योंकि कई बार योजनाएं लालफीताशाही में उलझ जाती हैं और कई बार बुनियादी ढांचे की कमी उन्हें बेअसर बना देती है। गैर–सरकारी संगठनों के सर्वेक्षण यह भी बताते हैं कि सरकार तो अपनी ओर से मोटी रकम इन योजनाओं पर खर्च करती है, लेकिन उसे लक्षित समूह तक पहुंचाया नहीं जाता।

एक अहम बात यह भी है कि गांवों और कस्बों तक ये योजनाएं मुश्किल से ही पहुंचती हैं। पहुंचती भी हैं तो वहां सिलाई–कढ़ाई के प्रशिक्षण तक ही सीमित रहती हैं। गांवों में इनके नदारद होने के कारण शिक्षा प्राप्त करने वाली लड़कियां भी या तो घरेलू कामों में लगी रहती हैं या खेती से जुड़े कामों में हाथ बंटाती रहती हैं। इसलिए उन स्थानों पर बेहतर प्रशिक्षण कार्यक्रमों वाली योजनाओं की आवश्यकता है।

स्वरोजगार के लिए धन भी एक महत्वपूर्ण पक्ष है। अक्सर लड़कियां प्रशिक्षण हासिल कर लेती हैं, लेकिन आर्थिक तंगी के कारण अपने उद्यम आरंभ नहीं कर पातीं। यदि उन्हें आर्थिक संसाधन मिल जाएं तो वे कारोबार आरंभ कर सकती हैं, जिनमें दर्जनों अन्य लड़कियों को रोजगार भी मिल सकते हैं। इसलिए सरकार को ऐसी योजनाएं आरंभ करनी चाहिए, जिनमें प्रशिक्षण के उपरांत लड़कियों को वास्तविक कार्यक्षेत्र का छह महीने या साल भर का अनुभव प्रदान किया जाए। उसके बाद उनसे उद्यम की रूपरेखा पूछी जाए और यदि उनके पास व्यवहार्य कार्ययोजना हो तो उन्हें आसानी से ऋण या अनुदान मुहैया कराया जाए ताकि वे बैंकों के चक्कर लगाए बगैर अपना कारोबार आरंभ कर सकें। यदि इन सभी पहलुओं पर काम किया जाता है तो लड़कियों के रोजगार की ठोस व्यवस्था सुनिश्चित हो सकती है।

(लेखक आर्थिक दैनिक 'बिजनेस स्टैंडर्ड' में पत्रकार हैं। इससे पहले संवाद समिति यूनीवार्ता में कार्यरत थे। गुरु जंभेश्वर विश्वविद्यालय से संबद्ध मीडिया संस्थानों में अध्यापन कर चुके हैं। इनके लेख विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।)

ई–मेल : rishabhakrishna@gmail.com

शिक्षित बालिका से ही होगा सशक्त देश

—अखिलेश आर्येन्दु

एक अनुमान के अनुसार देश के लगभग 6 लाख प्राथमिक विद्यालयों में 86 प्रतिशत से अधिक गांवों में हैं लेकिन अधिकतर ग्रामीण स्कूलों में सरकारी योजनाओं का लाभ नहीं पहुंच पा रहा है। अभी सैकड़ों गांवों की लड़कियां निरक्षर हैं। इसके एक नहीं बल्कि अनेक कारण हैं। सुदूर गांवों में आज भी प्राथमिक विद्यालय नहीं हैं। ऐसे सैकड़ों गांव हैं जहां के प्राथमिक पाठशाला में एक कमरे के अलावा और कुछ भी सुविधा उपलब्ध नहीं है। सरकार ने चालीस बच्चों पर एक शिक्षिका का जो पैमाना प्रस्तावित किया हुआ है वह भी आधा-अधूरा ही है। बच्चियों का बीच में ही स्कूल छोड़ने का एक बड़ा कारण पाठशालाओं में शौचालय न होना भी रहा है।

महात्मा गांधी ने शिक्षा को बच्चों के सर्वांगीण विकास का द्वार बताते हुए कहा है—'शिक्षा बालक तथा व्यक्ति के शरीर, मन एवं आत्मा की सर्वोत्तमता का सामान्य प्रकटीकरण है। शिक्षा व्यक्ति के शारीरिक, बौद्धिक, संवेगात्मक, नैतिक एवं आर्थिक विकास से संबद्ध है। यह विकास और समाज के सर्वांगीण विकास को ही लक्षित करती है।' स्वतंत्रता के बाद भारत में गांधी जी के मन्तव्य को पूरा करने के लिए शिक्षा के क्षेत्र में अनेक प्रयास किए गए। उन प्रयासों का ही प्रतिफल है कि शिक्षा का प्रकाश आज गांव—गांव तक पहुंच रहा है।

विगत सदी के अंतिम दशक में विश्व बैंक के तत्कालीन अर्थशास्त्री प्रो. समर्स ने एक आकलन किया था जिसके अनुसार भारत में एक सौ बालिकाओं को शिक्षा सुविधा उपलब्ध कराने में 32 हजार अमेरिकी डॉलर का खर्च आएगा जबकि इस धन के एवज में 43 शिशुओं और दो माताओं की मृत्यु रुकेगी एवं 300 जन्म रुकेंगे। इन लाभों का मूल्य 52 हजार डॉलर होगा। इसके अतिरिक्त उत्पादकता पर जो सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा, वह बोनस के रूप में होगा। जाहिर तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में जैसे—जैसे बालिकाएं शिक्षित हो रही हैं, प्रो. समर्स का आकलन सामने आ रहा है। परिवार और समाज की कई समस्याएं धीरे—धीरे समाप्त हो रही हैं। हरियाणा, पंजाब और मध्यप्रदेश जैसे राज्यों में जहां कन्या भ्रूणहत्या से लेकर अन्य अनेक प्रकार के भेदभाव लड़कियों के साथ अधिक देखने में आते रहे हैं, वहां भी लोगों में जागरुकता आनी प्रारम्भ हो गई है। केंद्र सरकार की 'बेटी बचाओ—बेटी पढ़ाओ' योजना के पहले लड़कियों को सुरक्षा और शिक्षा देने वाली अनेक योजनाएं अमल में लाई जा रही थीं जिससे गांवों में लड़कियों के शिक्षा पाने की तादाद बढ़ी। अभी गांवों में गरीबी के कारण मिडिल या हाईस्कूल के बाद अधिकांश लड़कियां स्कूल छोड़ देती हैं। अल्पसंख्यक परिवार की लड़कियों को उच्च शिक्षा के लिए 27 अप्रैल, 2012 को 'निगरानी समिति' का

गठन किया था, जिसका मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा क्रियान्वयन किया जा रहा है। इससे शहरी ही नहीं ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले परिवार की लड़कियों को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निरन्तर आगे बढ़ने के नये–नये अवसर प्राप्त हो रहे हैं।

शिक्षा की नींव प्रारम्भिक शिक्षा है जिसमें प्राथमिक और उच्चतर प्रारम्भिक शिक्षा सम्मिलित है। इस नींव को सुदृढ़ करने तथा सभी के लिए गुणवत्ता पूर्ण सार्वभौमिक पहुंच के शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार (आरटीआई) अधिनियम 2009 के तहत दिया गया जो 1 अप्रैल, 2010 से लागू है।

शिक्षा की योजनाएं और उनका लाभ

केंद्र सरकार का महिला समाख्या एक अनोखा विकास उन्मुखी कार्यक्रम है जो पिछड़े विकासखण्डों (ब्लाक) पर ध्यान केंद्रित करता है। इस कार्यक्रम के द्वारा ग्रामीण तथा हाशिए पर पड़ी महिलाओं को सशक्त बनाने पर अधिक बल दिया जाता है। इस कार्यक्रम के द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र तथा भौतिक एवं अध्ययन प्रक्रिया में प्रभावशाली रूप से भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। आरटीआई अधिनियम लागू होने के बाद ग्रामीण क्षेत्रों में माध्यमिक स्कूलों की क्षमता में काफी विकास हुआ। इस बाबत कई माध्यत्मिक शिक्षा की योजनाएं राष्ट्रीय–स्तर पर चलाई जा रही हैं जो इस प्रकार हैं–

1–राष्ट्रीय माध्यामिक शिक्षा अधिनियम (आरएमएसए) 2–मॉडल स्कूलों की स्थापना 3–माध्यमिक एवं उच्च माध्यामिक स्कूलों की छात्राओं के लिए छात्रावास की स्थापना 4–बालिकाओं की माध्यमिक शिक्षा के लिए प्रोत्साहन की राष्ट्रीय योजना 5–राष्ट्रीय–स्तर पर अपंगों के लिए समावेशी शिक्षा 6–नेशनल मेरिट–कम–मींस स्कॉलरशिप स्कीम (एनएमएमएस) 8–स्कूलों में आईसीटी योजना। इन योजनाओं से बालिकाओं को कई क्षेत्रों में उनकी योग्यता और प्रतिभा के अनुसार आगे बढ़ने में सहायता मिल रही है लेकिन अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। देश–दुनिया के बारे में जानने के अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्र की नई पीढ़ी(बालिकाएं) रोजगार, केंद्र की सहायता से चलने वाले कुटीर उद्योगों के बारे में भी गांव की लड़कियां नई–नई जानकारी पाकर आगे कदम बढ़ा रही हैं। केंद्र सरकार की इन योजनाओं से ग्रामीण क्षेत्र की बालिकाओं को लाभ तो मिला है लेकिन पिछड़े गांवों के परिवारों को योजनाओं की जानकारी ठीक से न हो पाने के कारण इनका लाभ नहीं पहुंच पाया है। इसलिए योजनाओं के लाभ के लिए ग्रामीण स्तर पर जागरुकता फैलाने की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय साक्षारता मिशन

भारत के सभी अनपढ़ लोगों को साक्षर करने के उद्देश्य से 1988 में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की शुरुआत की गई। इस मिशन से प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। असमानता जहां इससे दूर हुई वहीं पर समाज में कई स्तरों पर लोगों में जागरुकता आई। ग्रामीण क्षेत्रों में इस अभियान ने लोगों को जैसे नींद से जगा दिया हो। साक्षारता की मसाल लिए इस अभियान के साथी गांवों में लोगों के मन से ही नहीं उनके जीवन से भी अशिक्षा का अधियारा काफी हद तक समाप्त करने में कामयाब रहे। राष्ट्रीय साक्षारता मिशन के रूप में साक्षर भारत (एसबी) का प्रारम्भ 8 सितंबर, 2009 को किया गया था। यह योजना 31 मार्च, 2012 तक प्रचलन में थी। अब साक्षर भारत कार्यक्रम को 12वीं पंचवर्षीय योजना (2012–17) में सम्मिलित कर लिया गया है।

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना

यह योजना 2004–05 में प्रारम्भ की गई। इसके अंतर्गत भौतिक दृष्टि से पिछड़े विकासखंडों में लड़कियों के 75 स्कूल खोलने की योजना चलाई जाती है। यह योजना अन्य योजनाओं की तुलना में व्यावहारिक रूप से पीछे दिखती है। इसकी अपेक्षा सर्वशिक्षा अभियान और जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम अधिक प्रभावी हैं। आंगनबाड़ी केंद्र के द्वारा बालिकाओं को शिक्षित करने का देशव्यापी कार्यक्रम सभी कार्यक्रमों से अधिक कारगर है। गांव की हर तबके की कन्याएं इससे जुड़कर शिक्षा के अतिरिक्त अन्य प्रकार की उद्यमिता को सीख रही हैं।

मिड–डे मील योजना

गांवों में पूर्ण साक्षारता प्राप्त करने के लिए 'मिड–डे मील योजना' की शुरुआत 15 अगस्त 1995 में की गई। इस समय इसके माध्यम से लगभग 15 करोड़ बच्चों को लाभ पहुंच रहा है। 28 नवंबर 2001 को सर्वोच्च न्यायालय ने अपने ऐतिहासिक फैसले में सभी राज्यों को मिड–डे मील देने का आदेश जारी किया। इस योजना के अंतर्गत अनाज की व्यवस्था राज्य सरकार को एफसीआई निःशुल्क करता है। भोजन पकाने तथा गुणवत्ता निर्धारण के लिए 2रुपये प्रति छात्र कन्वर्जन मूल्य का मानक रखा गया है। इस योजना से गांवों की उन परिवारों की लड़कियों को स्कूल जाने में सहुलियत हुई जो गरीबी के कारण और भूखे पेट रहने के कारण स्कूल नहीं जा पाती थीं।

प्राथमिक शिक्षा के बढ़ते कदम

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21–ए और इसके अनुसार बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 सारे देश में 1 अप्रैल, 2010 से लागू हो गया है। इस ऐतिहासिक अधिनियम के बनने के बाद तो प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में जैसै क्रांति ही आ गई। प्राथमिक शिक्षा को आंदोलन का

रूप दसवीं पंचवर्षीय योजना में दिया गया। इसके लिए केंद्र ने 28750 करोड़ रुपये का आंवटन किया। वर्ष 2002–03 में यह राशि 4667 करोड़ रुपये की थी। इससे गांव के ऐसे परिवार जो बेसहारा और निर्धन थे, अपनी लाडली को पढ़ाने के लिए आगे आए। आज गांव के अधिकांश परिवारों की लड़कियां साक्षर ही नहीं आगे शिक्षा प्राप्त करने के लिए भी आगे आ रही हैं। इस ऐतिहासिक घटनाक्रम के बाद 2010–11 में शुरू की गई सुधार की प्रक्रिया 2011–12 और 2013–14 में ही नहीं 2015 में भी आगे बढ़ रही है।

स्वतंत्रता के छह दशक पश्चात भी जब प्राथमिक शिक्षा अपना वास्तविक स्वरूप और उद्देश्य नहीं प्राप्त कर सकी तब केंद्र सरकार ने 86 वें संविधान संशोधन 2002 के माध्यम से 6–14 आयु वर्ग के बच्चों को शिक्षा का मौलिक अधिकार प्रदान करते हुए संविधान में एक नया अनुच्छेद 21(ए) जोड़ा। इससे देश के सारे बच्चों की शिक्षा उनका मौलिक अधिकार में मिल गया। स्वतंत्रता के बाद से ही प्राथमिक शिक्षा की दिशा में अनेक प्रयास किए गए। अनिवार्य शिक्षा अधिकार 2010 और राष्ट्रीय निगरानी समिति 2012 हाल ही में उठाए गए कुछ कदम है।

भारत में प्राथमिक शिक्षा के साथ–साथ मैट्रिक, इंटर और उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी प्रगति हुई है। लेकिन सरकार की अपेक्षाओं से कम शिक्षा की उच्च स्तर पर प्रगति हुई है। इसका कारण लड़कियों के उच्च शिक्षा संस्थानों का दूर होना, शिक्षा का लगातार महंगा होते जाना और गरीबी है। ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षा के मामले में अभी आगे बढ़ने की आवश्यकता है। 1986 की शिक्षा नीति के अन्तर्गत प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुविधायुक्त बनाने के लिए 1 किमी. की दूरी के अंदर प्राथमिक स्कूल एवं 3 किमी की दूरी पर एक उच्च प्राथमिक विद्यालय खोलने की बात कही गई थी। इतना ही नहीं प्राथमिक स्कूलों की दशा–दिशा सुधारने के लिए 'आपरेशन ब्लैकबोर्ड योजना' का प्रस्ताव भी आगे बढ़ाया गया। इसके बाद 1992–93 में बाल शिक्षा के क्षेत्र में भारत में एक नई रोशनी तब आई जब भारत को संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार चार्टर का हस्ताक्षरकर्ता देश होने के नाते बाल शिक्षा को मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता प्राप्त करना जरूरी हो गया। इसी दौरान (1993) सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उन्नीकृष्णन बनाम आंध्रप्रदेश सरकार का मामला सामने आया जिसमें कहा गया था कि शिक्षा के अधिकार की संविधान के अध्याय 3 के अनुच्छेद 21 में जीवन के मौलिक अधिकार के संदर्भ में गहन विवेचना की गई थी। जैसे–जैसे शिक्षा के क्षेत्र में नए–नए सुझाव आते गए और नई–नई योजनाएं केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा बनाकर सभी को शिक्षित करने के कदम उठाए जाते रहे जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं को शिक्षा प्राप्त करने का रास्ता खुलता गया।

निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा

केंद्र ने 2002 में संविधान संशोधन प्रस्ताव पास किया जिसमें अनुच्छेद 21ए को सम्मिलित किया गया। इस कानून में 6–14 वर्ष के बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान किया गया है। इस अनुच्छेद में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षा को मौलिक अधिकार के दायरे में ला दिया गया। 4 अगस्त , 2009 को शिक्षा का अधिकार कानून संसद में पारित किया गया और 27 अगस्त, 2009 को भारत सरकार के गजट में प्रकाशित हुआ। अप्रैल 2010 में यह सारे देश में लागू कर दिया गया।

नेशनल मैरिट–कम–मींस स्कॉलरशिप योजना

इतना ही नहीं केंद्र और राज्यों सरकारों ने लड़कियों के लिए और भी योजनाएं बनाईं जिससे उनमें आगे बढ़ने की ललक बढ़ी। इसमें 'नेशनल मैरिट–कम–मींस स्कॉलरशिप योजना' प्रमुख है। यह योजना 2008 में प्रारम्भ की गई। केंद्र द्वारा प्रारम्भ की गई इस योजना के अंतर्गत आर्थिक रूप से कमजोर समूह के मेधावी छात्र–छात्राओं के आठवीं कक्षा में स्कूल छोड़ने वालों की संख्या में रोक लगाने के साथ ही साथ बारहवीं, माध्यमिक तथा उच्च–माध्यमिक स्तर की शिक्षा जारी रखने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु लागू की गई। गरीब परिवार के बच्चों को इसके अंतर्गत 500 रुपये दिये जाते हैं।

इसी क्रम में मई 2008 में ही लड़कियों की माध्यमिक शिक्षा के लिए प्रोत्साहन की राष्ट्रीय योजना केंद्र सरकार द्वारा प्रारम्भ की गई। इसके अंतर्गत माध्यमिक–स्तर पर स्कूल छोड़ने वाली लड़कियों को मदद दी गई। विशेष रूप से अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की लड़कियों के लिए यह योजना लागू की गई। इस योजना के अंतर्गत नौवीं कक्षा में नामांकन पर अविवाहित पात्र लड़कियों के नाम 3,000 रुपये जमा कर दिए जाते हैं जिसे 18 वर्ष की आयु और दसवीं योजना के अंतर्गत (1)विद्यालय से आठवीं उत्तीर्ण करने वाली सभी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की लड़कियां (2) कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों से आठवीं उत्तीर्ण करने वाली सभी लड़कियां चाहे जिस समुदाय की हों तथा सरकारी, सरकारी सहायता प्राप्त और स्थानीय निकायों के स्कूलों में नौवीं में प्रवेश लने वाली लड़कियां आती हैं। जनवरी 2013 से मार्च 2014 तक की अवधि के लिए 3,30,076 लड़कियों के लिए 99.02 करोड़ रुपये स्वीकृत हुए। इस प्रकार देखा जाए तो इस योजना से ग्रामीण क्षेत्रों की सभी समुदायों की लड़कियों को शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ने में सहायता मिली।

कितना बढ़ पाया है शिक्षा का कॉरवां

स्वतंत्रता के बाद प्रथम पंचवर्षीय योजना से बारहवीं पंचवर्षीय योजना तक बजट में शिक्षा के लिए अलग प्रावधान

भी किए गए लेकिन लड़कियों के प्रति आम लोगों की स्वस्थ मानसिकता न होने, स्कूलों, कालेजों और सुविधाओं के अभाव में लड़कों की अपेक्षा लड़कियां बहुत पीछे रहीं। गांवों के हालात तो और भी खराब रहे। एक आंकड़े के अनुसार देश के लगभग 6 लाख प्राथमिक विद्यालयों में 86 प्रतिशत से अधिक गांवों में हैं लेकिन अधिकतर ग्रामीण स्कूलों को सरकारी योजनाओं का लाभ नहीं पहुंच पा रहा है। यहां तक कि अफ्रीका जैसे पिछड़े देश से भी महिला साक्षरता दर कम है। अभी सैकड़ों गांवों की लड़कियां निरक्षर हैं। इसके एक नहीं बल्कि अनेक कारण हैं। केंद्र सरकार ने बालिका पाठशालाओं में अन्य सुविधाओं के साथ–साथ शौचालय बनवाने की मुहिम चलाई हुई है। बच्चियों का बीच में ही स्कूल छोड़ने का एक बड़ा कारण पाठशालाओं में शौचालय न होना भी रहा है। सुदूर गांवों में आज भी प्राथमिक विद्यालय नहीं हैं। ऐसे सैकड़ों गांव हैं जहां के प्राथमिक पाठशाला में एक कमरे के अलावा और कुछ भी सुविधा उपलब्ध नहीं है। सरकार ने चालिस बच्चों पर एक शिक्षिका का जो पैमाना प्रस्तावित किया हुआ है वह भी आधा–अधूरा ही है। एक अध्ययन के अनुसार 34 प्रतिशत परिवार कपड़ों, पुस्तकों और अन्य चीजों की व्यवस्था न दे पाने के कारण लड़कियों को नहीं भेज पा रहे हैं। इसी तरह बच्चों की अनिच्छा से 15 प्रतिशत परिवार बच्चियों को पाठशाला नहीं भेज पाते हैं। इसका कारण शिक्षिकाओं का बच्चियों के साथ ठीक व्यवहार न होना, मार–पीट 13 प्रतिशत लड़कियां इस लिए पढ़ने नहीं जाती क्योंकि उनके माता–पिता घर या बाहर के कार्यों को उनसे करवाते हैं।

नैतिक शिक्षा की अनिवार्यता

सरकार नई–नई योजनाओं के माध्यम से सबको जहां शिक्षा दिलाने के लिए आगे कदम बढ़ा रही है वहीं पर मंहगी होती जा रही शिक्षा को ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अनुदान और अन्य सुविधाएं प्रदान कर लड़कों और लड़कियों को स्वावलम्बी बनाने और नैतिक धारा में लाने का कार्य भी कर रही है। प्राथमिक शिक्षा ही नहीं उच्च माध्यमिक शिक्षा भी लड़कियों के लिए पूरी तरह मुफीद बने इसके लिए सरकारी प्रयासों के अलावा व्यक्तिगत स्तर पर तथा गैर–सरकारी प्रयासों को व्यावहारिकता के धरातल पर होना चाहिए। राधाकृष्ण आयोग ने अपने सुझावों में उच्च शिक्षा को सर्वाधिक महत्व जीवन मूल्यों की शिक्षा पर दिया था। इसके लिए यहां तक कहा गया कि शिक्षा के कार्यक्रम में कुछ देर 'प्रार्थना' को अनिवार्य कर दिया जाए ताकि छात्र–छात्राएं नैतिक प्रश्नों पर सोचने का निश्चित और अनिवार्य समय निकाल सकें। हम जानते हैं बुनियादी शिक्षा, प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च माध्यमिक विद्यालयों में प्रतिदिन प्रार्थना को अनिवार्य बनाया गया है।

ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की समस्याएं

अनेक सरकारी और गैर–सरकारी प्रयासों के बावजूद ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियों की शिक्षा का प्रतिशत लड़कों की अपेक्षा काफी कम है। इसके एक नहीं बल्कि अनेक कारण हैं।

- सबसे बड़ी समस्या धन की है। सरकार अन्य मदों की तुलना में शिक्षा पर व्यय बहुत कम करती है।
- ऐसे सैकड़ों विद्यालय हैं जो कागजों पर चल रहे हैं। इसके अलावा एक कमरे वाले विद्यालयों की संख्या हजारों में है। जहां न शिक्षिकाएं नियमित आती हैं और न बच्चों के बैठने आदि की कोई व्यवस्था ही है।
- पाठ्यक्रम बच्चों की रुचि और सहजता वाला नहीं है। इस कारण बच्चे पढ़ने में रुचि नहीं लेते।
- पर्याप्त मात्रा में विद्यालयों का न होना भी एक बड़ी समस्या है।
- कुछ प्राकृतिक कठिनाइयों के कारण भी प्रत्येक गांव में लड़कियों के विद्यालय नहीं खोले जा सकते हैं। जैसे गांवों का दूर–दूर होना और छोटा होना।
- सामाजिक समस्याओं जैसे लड़कियों के साथ छेड़छाड़, आपसी टकराव, माता–पिता द्वारा अधिक डांट–फटकार के कारण भी लड़कियां पाठशाला जाने से कतराती हैं।

गैर–सरकारी संगठनों की भूमिका

शिक्षा के क्षेत्र में गैर–सरकारी संगठनों, समितियों और संस्थाओं की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है। बेहतर शिक्षा प्राप्त करने की बात अब सरकारी नहीं गैर–सरकारी संस्थाओं और संस्थानों के साथ जुड़ गई है। इससे निश्चित ही शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति हुई है। लेकिन गैर–सरकारी संस्थाओं की शिक्षा गांवों में जिस रूप में पहुंच रही है वह सभी परिवारों की पहुंच के बाहर है। मजहबी विद्यालयों की शिक्षा उस मजहब से ताल्लुक रखने वाले परिवार के लोग ही बच्चों को दिलाते हैं। गैर–सरकारी शिक्षा संस्थान अधिकांशतः कस्बों और शहरों में हैं जो गांव की गरीब परिवार की लड़कियों की पहुंच के बाहर है। आर्य समाज के द्वारा संचालित डीएवी, जो सरकार के बाद देश में सबसे अधिक चल रहे हैं, मदरसे और चर्च के स्कूलों में लड़कियों को भेजने वाले गांव के वे ही परिवार हैं जिनके पास धनाभाव नहीं है। एक आंकड़े के अनुसार शिक्षा क्षेत्र के एनजीओ जो सरकारी और विदेशी चंदे से चलते हैं अधिकांशतः फाइलों पर ही देखे जाते हैं। फिर भी गैर–सरकारी संगठनों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है।

(लेखक संस्कृतिवेत्ता और साहित्यकार हैं)
ई–मेल akhilesh.aryendu@gmail.com

बालिका सशक्तीकरण में बालिकाओं के स्वास्थ्य एवं पोषण का महत्व

—डॉ संतोष जैन पासी एवं सुरिंद्रा जैन

गर्भावस्था के दौरान और बच्चे के जीवन के पहले दो-तीन वर्षों (1000 दिन) में होने वाले कुपोषण से शिशु एवं बच्चे के शारीरिक विकास, बौद्धिक या संज्ञानात्मक क्षमताओं और प्रतिरक्षण की समर्थताओं पर स्थायी रूप से नुकसान पहुंच सकता है। अतः बालिकाओं/किशोरियों और महिलाओं (गर्भावस्था के पहले, गर्भावस्था के दौरान और प्रसव के पश्चात धात्री माता) के लिए पर्याप्त पोषण अति आवश्यक है। इस पहलू को ध्यान में रखते हुए हम यह दावे से कह सकते हैं कि लड़कों/पुरुषों की तुलना में उसी आयु वर्ग की बालिकाओं और महिलाओं को अधिक प्राथमिकता दिए जाने की जरूरत है। बालिकाओं को वास्तव में सशक्त बनाने के लिए पहले समाज की सोच को बदलना होगा। शिक्षारूपी दीपक से समाज में फैले अशिक्षा रूपी अन्धकार को मिटाना होगा तथा लड़के व लड़की के बीच का भेद मिटाना होगा!

अच्छा पोषण न केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य और विकास पर ही अपितु देश भर के लोगों और सारी मानव–जाति के स्वास्थ्य एवं उत्पादन क्षमता पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। हालांकि, इसका अच्छा असर घर से शुरू होता है, इसका लाभ दूर–दूर तक देखा जा सकता है। इसके विपरीत, जीवनकाल में किसी भी आयु/अवस्था में होने वाले कुपोषण से व्यक्ति के स्वास्थ्य, वृद्धि और विकास पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। लेकिन, गर्भावस्था के दौरान और बच्चे के जीवन के पहले दो–तीन वर्षों (1000 दिन) में होने वाले कुपोषण से शिशु एवं बच्चे के शारीरिक विकास, बौद्धिक या संज्ञानात्मक क्षमताओं और प्रतिरक्षण की समर्थताओं पर स्थायी रूप से नुकसान पहुंच सकता है। अतः बालिकाओं/किशोरियों और महिलाओं (गर्भावस्था के पहले, गर्भावस्था के दौरान और प्रसव के पश्चात धात्री माता) के लिए पर्याप्त पोषण अति आवश्यक है। इस पहलू को ध्यान में रखते हुए हम यह दावे से कह सकते हैं कि लड़कों/पुरुषों की तुलना में उसी आयु वर्ग की बालिकाओं और महिलाओं को प्राथमिकता दिए जाने की जरूरत है।

किशोरावस्था– जीवनचक्र का एक महत्वपूर्ण चरण है किशोरावस्था, जिसके दौरान न केवल हमारे शरीर का चहुंमुखी विकास ही तीव्र गति से होता है अपितु शारीरिक संरचना में भी अत्यधिक परिवर्तन आता है। इस आयु में होने वाले बदलाव बालिकाओं के संदर्भ में विशेष तौर पर महत्वपूर्ण

हैं और इनके फलस्वरूप किशोरियों की पौष्टिक तत्वों की आवश्यकताएं भी काफी बढ़ जाती हैं। तालिका में भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (ICMR, 2010) द्वारा लड़के एवं लड़कियों की पौष्टिक तत्वों की जरूरतों का तुलनात्मक वर्णन किया गया है। जन्म से 10 वर्ष तक की आयु के लड़के एवं लड़कियों की पौष्टिक जरूरतें काफी हद तक एक समान होने के कारण उनकी जरूरतों को तालिका में सूचीबद्ध नहीं किया गया है। किशोरावस्था में चूंकि लड़कियों का शारीरिक वजन लड़कों से कम होता है, इसी कारण लड़कों की तुलना में लड़कियों की ऊर्जा की जरूरतें भले ही कम होती हैं, किन्तु, दूसरे महत्वपूर्ण पौष्टिक तत्वों की जरूरतें जैसे कि विभिन्न विटामिंस व खनिज लवणों (कैल्शियम, आयरन, जिंक, विटामिन ए, बी समूह की विटामिन और विटामिन सी इत्यादि) की जरूरतें लड़कों के समान ही होती हैं। यह तथ्य इस बात को दर्शाता है कि लड़कियों की चाहे भोजन की कुल मात्रा लड़कों की तुलना में कम होती है, परन्तु उनके आहार की गुणवत्ता लड़कों के आहार से कहीं बेहतर होनी चाहिए, तभी तो उनकी प्रोटीन एवं सारे विटामिंस व खनिज लवणों की जरूरतें पूरी हो पाएंगी।

किशोरावस्था में खासतौर पर पोषण पर उचित ध्यान दिया जाना अति आवश्यक है, क्योंकि यह जीवन की एक ऐसी विशेष अवस्था है जिसके दौरान मनुष्य को दूसरी बार मौका मिलता है कि उसकी रुकी हुई या धीमी गति से होने वाली शारीरिक वृद्धि एक और अवसर पाकर उचित दिशा की ओर बढ़ सके। यदि बाल्यावस्था में कोई पोषण–सम्बन्धी कमी रह गई हो तो इस अवस्था में उसकी भरपाई की जा सकती है। किशोर और किशोरियों–दोनों को ही अधिक पोषणयुक्त आहार की जरुरत होती है। किन्तु, जागरुकता की कमी और व्यापक लैंगिक भेदभाव के कारण किशोरियों को प्रायः जरूरत के अनुसार पोषाहार नहीं मिलता।

क्यों पड़ी बालिकाओं के सशक्तीकरण की जरूरत– आमतौर पर देखा जाता है कि लड़कों के मुकाबले लड़कियों के सन्दर्भ में जन्म से लेकर मरण तक असमानता रखी जाती है। हालांकि, देश व मानव जाति के उत्थान के लिए स्त्री–पुरुष व बालक–बालिकाओं का सशक्तीकरण अत्यंत आवश्यक है। बालिकाओं का सशक्तीकरण विशेषतौर पर महत्वपूर्ण है क्योंकि भावी माताएं आने वाली पीढ़ियों की जननी होने के नाते हमारे देश के विकास की मजबूत नींव डालेंगी तथा हमारे देश का उत्थान करेंगी। आज ना केवल बेटी पैदा होते ही, अपितु बेटी के गर्भ में आने पर ही (अल्ट्रासाउंड टेस्ट द्वारा पता करके) या तो कन्या भ्रूण की हत्या कर दी जाती है और या फिर ऐसी गर्भवती मां की पौष्टिक व दूसरी जरूरतों को अनदेखा करके उसका उचित प्रकार से ध्यान नहीं रखा जाता, जिसके फलस्वरूप पैदा होने वाली संतान–यानी कि लड़की जन्म से ही कमजोर व कुपोषित रह जाती है और कई बार तो ऐसी नवजात लड़कियों की जन्म के कुछ दिन बाद ही मृत्यु भी हो जाती है।

भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार पिछले 64 सालों में (1947–2011) पहली बार हमारे देश के कई राज्यों में लड़कियों

किशोर एवं किशोरियों के लिए विभिन्न पोषक तत्वों की दैनिक जरूरतें

वर्ग (उम्र / लिंग)	शारीरिक वजन (किलो)	ऊर्जा (किलो कैलोरी)	प्रोटीन (ग्राम)	वसा (ग्राम)	कैल्शियम (मिलीग्राम)	आयरन (मिलीग्राम)	जिंक (मिलीग्राम)	विटामिन ए (माइक्रोग्राम) रेटिनोल	विटामिन ए (माइक्रोग्राम) बीटा कैरोटीन	थायमीन (मिलीग्राम)	राइबोफ्लेविन (मिलीग्राम)	नियासिन (मिलीग्राम)	फोलिकएसिड (माइक्रोग्राम)	विटामिन बी^{12} (माइक्रोग्राम)	विटामिन सी (मिलीग्राम)
आयु : 10–12 वर्ष															
लड़के	34.3	2190	39.9	35	800	21	9	600	4800	1.1	1.3	15	140	0.2 से 1.0	40
लड़कियां	35.0	2010	40.4	35	800	27	9	600	4800	1.0	1.2	13	140	0.2 से 1.0	40
आयु : 13 – 15 वर्ष															
लड़के	47.6	2750	54.3	45	800	32	11	600	4800	1.4	1.6	16	150	0.2 से 1.0	40
लड़कियां	46.6	2330	51.9	40	800	27	11	600	4800	1.2	1.4	14	150	0.2 से 1.0	40
आयु : 16 – 17 वर्ष															
लड़के	55.4	3020	61.5	50	800	28	12	600	4800	1.5	1.8	17	200	0.2 से 1.0	40
लड़कियां	52.1	2440	55.5	35	800	26	12	600	4800	1.0	1.2	14	200	0.2 से 1.0	40

स्रोतः आई.सी.एम.आर 2010

की संख्या (0–6वर्ष) 914 लड़कियां प्रति 1000 लड़कों से भी नीचे गिर गई है। 1990 के नोबेल पुरस्कार विजेता और जाने–माने अर्थशास्त्री प्रोफेसर अमर्त्य सेन की टिप्पणी 'लापता महिलाएं' और प्रसिद्ध डेमोग्राफर प्रोफेसर आशीष बोस द्वारा कथित 'लापता लड़कियां' (0–6वर्ष) के सन्दर्भ में कहे गए तथ्यों ने दुनिया को सतर्क कर दिया है।

कुपोषण की समस्या को दूर करने और पीढ़ी–दर–पीढ़ी चल रहे कुपोषण के चक्र को तोड़ने के लिए बालिकाओं को पौष्टिक आहार विशेष तौर पर लौह, फोलिक एसिड और दूसरे पौष्टिक तत्वों से भरपूर तथा उपयुक्त कैलोरीयुक्त भोजन उपलब्ध करवाना परिवार, समाज व सरकार का उत्तरदायित्व होना चाहिए, जिससे कि हमारी किशोरियां आने वाले समय में मातृत्व का बोझ भली प्रकार उठा सकें और स्वस्थ शिशु को जन्म दे सकें।

महात्मा गांधी जी ने वर्षों पहले कहा था 'यदि आप एक आदमी को शिक्षित करते हैं, तो मूल रूप से आप एक व्यक्ति को ही शिक्षित, करते हैं, लेकिन जब आप एक महिला को शिक्षित करते हैं, तो आप पूरे परिवार एवं समाज के साथ–साथ एक राष्ट्र को भी शिक्षित बनाते हैं'।

यदि हम अपने राष्ट्र को ऊंचा उठाना चाहते हैं, तो हमें बालिकाओं को शिक्षा के माध्यम से सशक्त बनाने की आवश्यकता पर जोर देना चाहिए। शिक्षा से अच्छे शारीरिक स्वास्थ्य के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है जो बालिका को न केवल शारीरिक रूप से मजबूत बनने के लिए सक्षम बनाता है, अपितु उसे मानसिक रूप से भी सशक्त बनाता है।

समाज में बालिकाओं की स्थिति में सुधार लाने के लिए

बालिका सशक्तीकरण पर राष्ट्रीय–स्तर पर जोर देना चाहिए, बालिकाओं की परिवार और समाज में सुरक्षा के लिए घरेलू हिंसा जैसे कई तरह के कानून बनाये जा रहे हैं लेकिन इन कानूनों और नियमों के बारे में जागरुकता हर एक बालिका व किशोरी तक पहुंचना अति आवश्यक है। इसके लिए भी उन्हें शिक्षित करना अनिवार्य है। विश्व–स्तर पर, पिछले कुछ दशकों से महिलाओं की समानता के सन्दर्भ में काफी हद तक जागरुकता बढ़ी है और इस दिशा में महिलाओं को शिक्षित करने के महत्व को भी ज्यादा से ज्यादा मान्यता प्राप्त हुई है।

इन सब बातों को मद्देनजर में रखते हुए माता–पिता को चाहिए कि बालिकाओं को शिक्षित करवाया जाए, 19 वर्ष की आयु से पहले उनकी शादी न की जाए और उन्हें यह भी सलाह देनी चाहिए कि पहला बच्चा 21 वर्ष से पहले न हो ताकि उनका शारीरिक विकास गर्भावस्था के लिए पूरी तरह तैयार हो जाए। अतः बालिकाओं एवं किशोरियों को पोषाहार का उचित ज्ञान, शिशु–देखभाल में प्रशिक्षण, फल एवं सब्जी प्रशिक्षण सुनिश्चित करवाना अत्यंत आवश्यक है।

बालिकाओं को वास्तव में सशक्त बनाने के लिए पहले समाज की सोच को बदलना होगा। शिक्षारूपी दीपक से समाज में फैले अशिक्षा रूपी अन्धकार को मिटाना होगा तथा लड़के व लड़की के बीच का भेद मिटाना होगा!

हमारे देश में आज भी ऐसे परिवारों की कमी नहीं जहां लोग यह सोचकर अपनी बेटी की पढ़ाई छुड़वा देते हैं कि "वो तो पराया धन है, उसे तो दूसरे घर जाना ही है तो हम उसे पढ़ाकर क्या करेंगे? ऐसे लोग यह सोचते हैं कि लड़कियां केवल इतना ही पढ़ें कि उनकी शादी ठीकठाक से हो जाए"। ऐसी सोच रखने वाले परिवारों को चाहिए कि वह अपना नजरिया बदलें और वह लड़कियों को लड़कों से ज्यादा नहीं, तो बराबर का दर्जा जरूर दें–फिर चाहे वो पढ़ाई–लिखाई में हो, खान–पान में हो, रहन–सहन में हो, या फिर अपने ख्यालों को व्यक्त करने के लिए किसी भी तरह की आजादी हो।

अंततः यह कहना मुनासिब होगा कि बालिकाओं के उचित पोषण व देखरेख के साथ–साथ उनका पूर्ण सशक्तीकरण करने में परिवार, समाज, जन–जन तथा सरकार को प्रभावकारी कदम उठाने चाहिए। इसके लिए जागरुकता के साथ–साथ नजरिये में बदलाव लाना अति आवश्यक है।

(लेखिका क्रमशः पूर्व निदेशक, इंस्टीट्यूट ऑफ होम इकोनोमिक्स, दिल्ली विश्वविद्यालय, सार्वजनिक स्वास्थ्य–पोषण विशेषज्ञ तथा पूर्व उप–तकनीकी सलाहकार, खाद्य एवं पोषण बोर्ड, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय हैं।)
ई–मेलः sjpassi@gmail.com

महिला सशक्तीकरण की बदलती तस्वीर

—संजय श्रीवास्तव

खेलों में छोटे-छोटे गांवों से किस तरह से महिलाएं निकलकर सशक्तीकरण की अवधारणा को मजबूत कर रही हैं, ये किसी से छिपा नहीं है। ज्यादातर खेलों में अंतर्राष्ट्रीय जगत में भारत का परचम पुरुषों से ज्यादा महिलाएं फहरा रही हैं। विज्ञान के वर्तमान दौर में ई.के.जानकी अमल, असीमा चक्रवर्ती, अर्चना शर्मा, इंदिरा नाथ, कस्तूरी दत्ता, आशा कोल्टे आदि भारतीय महिला वैज्ञानिकों ने सराहनीय काम किया है। कल्पना चावला देश में सबसे ज्यादा लकड़ियों की आदर्श हैं और स्पेस साइंस या एयरो-स्पेस इंजीनियरिंग विधा में पढ़ाई कर रही हैं। अनुसंधान का क्षेत्र हो या प्रौद्योगिकी का-हर तरफ महिलाओं के योगदान को देख सकते हैं। रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन यानी डीआरडीओ में 20 प्रतिशत महिला वैज्ञानिक हैं जिनकी संख्या निरंतर बढ़ रही है। अन्य वैज्ञानिक संगठनों में भी महिलाओं की भागीदारी बढ़ रही है।

क्या आपको पिछले गणतंत्र दिवस यानी वर्ष 2015 में दिल्ली के राजपथ पर हुई गणतंत्र दिवस परेड की याद है। तब हमने देश का 66वां गणतंत्र मनाया था। उस मौके पर आयोजित परेड की थीम थी नारी शक्ति। एक महिला और महिला मार्चिंग दस्ते के नेतृत्व में ही परेड की शुरुआत हुई। गणतंत्र दिवस का यह पहला मौका था जब थलसेना, नौसेना और वायुसेना के महिला सैन्य दल भी परेड में शामिल हुए। ये संकेत था कि देश में स्त्री सशक्तीकरण के आगे बढ़ते कदमों की उजली तस्वीर का। उसके तुरंत बाद जब हमने पूरी दुनिया में अपने मंगल मिशन की कामयाबी के झंडे गाड़े तो हमारी भारतीय महिला वैज्ञानिकों की वैश्विक स्तर पर खूब तारीफ हुई। आजादी के इतने वर्षों बाद अब देश की आधी आबादी अपनी सफलता की नई इबारत बड़ी कुशलता से लिख रही है।

भारतीय महिलाएं आज हर क्षेत्र में हर बाधा को पार करते हुए आगे बढ़ रही हैं। आज निजी क्षेत्र की कंपनियों में कुल वर्कफोर्स की 24.5 फीसदी भागीदारी महिलाओं की है। सार्वजानिक क्षेत्र की कम्पनियों में महिलाओं की ये हिस्सेदारी तकरीबन 17.9 प्रतिशत है। कई ऐसे क्षेत्र जिनमें केवल पुरुषों का एकाधिकार था, वहां महिलाएं अपनी क्षमता का लोहा मनवा रही हैं। नई पीढ़ी की कामकाजी महिलाएं महत्वाकांक्षी भी हैं और साहसी भी। यही वजह है कि अब कोई भी क्षेत्र महिलाओं के लिए अछूता नहीं है।

देश की प्रत्यक्ष श्रमशक्ति में 40 प्रतिशत तथा अप्रत्यक्ष श्रमशक्ति में 90 प्रतिशत योगदान महिलाओं का ही है। एक अनुमान के मुताबिक वर्ष 2025 तक भारत पूरी दुनिया को 13 करोड़ कर्मचारी प्रदान कर सकेगा। इस श्रमशक्ति का बड़ा हिस्सा महिलाएं होंगी। विशेषकर युवा महिलाएं जो शिक्षा, बैंकिंग, आई टी और यहां तक कि सैन्य बलों में भी अपना स्थान बना चुकी हैं। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में गांवों और कृषि कार्यों में भी महिलाओं की हिस्सेदारी कम नहीं। ये बात भी सही है कि ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को जब तक ताकत नहीं मिलती तब तक देश का स्त्री सशक्तीकरण का सपना अधूरा रहेगा। लेकिन वहां भी हाल के बरसों में उल्लेखनीय बदलाव तो दिखे हैं और साथ ही भविष्य में कहीं ज्यादा बदलावों की आहट भी।

राजस्थान के पाली की शांति देवी मजदूरी करके परिवार का पेट पालती थी। घर में रोजगार का कोई साधन नहीं था। पति

को हार्ट की बीमारी थी। इसी दौरान उन्हें स्वयंसहायता समूह की जानकारी मिली। फिर कुछ साल पहले उन्होंने गांव की दस महिलाओं का ग्रुप बनाया। सबसे सौ–सौ रुपये इकट्ठा करके काम शुरू किया। उनका समूह हैंडमेड ज्वैलरी और खाद्य सामग्री तैयार करने लगा। आज शांति पूरे राजस्थान की महिलाओं के लिए रोल मॉडल हैं। उनकी संस्था ओमगुरु स्वयंसहायता समूह में अब 90 महिलाएं काम करती हैं। पांच लाख रुपये बैंक अकाउंट में हैं तो छह लाख रुपये से ज्यादा के सामान का स्टॉक उनके पास रहता है। सभी महिलाओं की जिंदगी बदल चुकी है। सभी आत्मनिर्भर हो चुकी हैं और उनका आत्मविश्वास देखते बनता है।

राजस्थान का ही एक और उदाहरण है। सोनिया कई साल से कठपुतलियां बना रही थीं। लेकिन अकेले उनके सामने चुनौतियां ज्यादा थीं और बाधाएं भी। उन्होंने महज चार–पांच साल पहले 15 महिलाओं के साथ मिलकर शुरुआत की। आज उनकी हालत बदली हुई है। उन्हें बाजार का साथ मिल चुका है। हर महिला सम्मान के साथ पैसा भी कमा रही है और संतुष्ट है। उन सभी को लगता है कि वो अपनी बनाई मजबूत जमीन पर खड़ी हैं।

उत्तराखण्ड दुग्ध विकास विभाग राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं को गंगा गाय योजना के माध्यम से दुग्ध व्यवसाय से जोड़ रहा है। राज्य में महिलाओं को दुग्ध व्यवसाय के माध्यम से आत्मनिर्भर और आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनाने की दिशा में ये कदम उठाया गया है। ग्राम पंचायत स्तर पर महिलाओं को दुग्ध व्यवसाय के लिए लगातार प्रेरित किया जा रहा है। उन्हें बैंकों से अनुदान मिल रहा है। बढ़िया नस्ल के दुधारू पशु उपलब्ध कराए जा रहे हैं। हल्द्वानी और नैनीताल मिलाकर आसपास में करीब –करीब 500 दुग्ध समितियां हैं जिसमें करीब 26 हजार महिलाएं काम कर रही हैं और अपने परिवार का भरण–पोषण कर रही हैं। सामाजिक विकास में लद्दाखी महिलाएं पुरुषों के साथ समान रूप से कंधे से कंधा मिलाकर कार्य करती हैं। पुरुष जहां खेती और अन्य कार्य करते हैं वहीं महिलाएं भी खाली वक्त का पूर्ण रूप से उपयोग करती हैं। यहां के अधिकतर गांवों में महिलाओं के स्वयंसहायता समूह सक्रिय रूप से कार्यरत हैं।

देशभर में ऐसी मिसालों की कमी नहीं। सरकार द्वारा स्त्री सशक्तीकरण के लिए चलाए जा रहे तमाम कार्यक्रमों से दूरदराज की अशिक्षित और गैरसंगठित महिलाओं में जागरुकता आई है। उन्हें दिशा मिली है। खुद के पैरों पर खड़ा होने के लिए सरकार की योजनाएं उनके लिए मददगार बन रही हैं। सरकारी संस्थाएं धीरे–धीरे ही सही लेकिन अब उनके हुनर के लिए बाजार का दरवाजा खोलने का काम कर रही हैं। मदद के लिए सभी संभव

24 जनवरी का दिन 'राष्ट्रीय बालिका दिवस' के रूप में मनाया जाता है। इस दिन इंदिरा गांधी को नारी शक्ति के रूप में याद किया जाता है। इस दिन इंदिरा गांधी पहली बार प्रधानमंत्री की कुर्सी पर बैठी थी इसलिए इस दिन को राष्ट्रीय बालिका दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया। यह निर्णय राष्ट्रीय स्तर पर लिया गया। राष्ट्रीय बालिका दिवस मनाने का उद्देश्य लड़कियों के बारे में व्याप्त भ्रांतियां दूर करना, जागरुकता फैलाना, और लोगों को कन्या भ्रूण हत्या के प्रतिकूल प्रभावों को बताना है।

प्लेटफार्म उपलब्ध कराए जा रहे हैं। ग्रामीण महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण के लिए प्रशिक्षण और रोजगार योजना शुरू की गई है। इसमें गरीब महिलाओं को खाद्य प्रसंस्करण, सूचना एवं प्रौद्योगिकी, बागवानी, हथकरघा, सिलाई–कढ़ाई, जरी, कृषि, हस्तशिल्प, रत्न एवं आभूषण क्षेत्र में कौशल विकास के लिए सहायता दी जाती है। ग्रामीण विकास मंत्रालय ने देश भर में ग्रामीण स्वरोजगार प्रशिक्षण योजना चला रखी है जिसकी जिम्मेदारी शहर के लीडिंग बैंकों को सौंपी गई है। बैंकों ने शहरों में अपने प्रशिक्षण संस्थान खोल रखे हैं जिसमें गांवों और शहरों की छोटी बस्तियों की गरीब महिलाओं को खुद के रोजगार के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षण पूरा होने के बाद महिलाओं का खुद का काम शुरू करवाया जाता है। खुद के काम के लिए आवश्यक धनराशि के लिए क्षेत्र के संबंधित बैंक से उन महिलाओं को बिना किसी गारंटी के लोन दिलवाया जाता है।

नाबार्ड के अधिकारियों के अनुसार देशभर में करीब 75 लाख स्वयंसहायता समूह विभिन्न बैंकों से जुड़े हैं। इनमे से करीब 48 लाख को बैंकों से सीधे ऋण की सुविधा हासिल है। इनमें से लगभग 82 फीसदी समूह महिलाओं के हैं। नाबार्ड के आंकड़ों से पता चलता है कि स्वयंसहायता समूह आंदोलन दक्षिण भारत के राज्यों में अधिक लोकप्रिय है।

व्यावसायिक संस्थानों में भी महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है। एक सर्वे के अनुसार भारतीय महिलाओं की भागीदारी कुल उद्योगों में दस प्रतिशत हैं और यह भागीदारी निरंतर गतिशील हो रही है। बैंकिग, केंद्र सरकार, राज्य सरकार, कॉर्पोरेट जगत, स्वयंसेवी संस्थाओं, तकनीकी क्षेत्र आदि में स्किल से लैस महिलाएं भारतीय अर्थव्यवस्था को बढ़ा रही हैं। महिलाओं के काम करने की क्षमता जैसे, नेटवर्किंग की क्षमता, काम के प्रति समर्पण, सहयोगियों के साथ मधुर व्यवहार, सीखने की जिज्ञासा, सकारात्मक सोच के इन्हीं गुणों के कारण महिलाएं आज इन क्षेत्रों में सफल नेतृत्व भी कर रही हैं।

दूसरे सर्वे के अनुसार भारत में कुल 9 लाख 95144 लघु उद्योग उद्यमशील महिलाओं द्बारा संचालित हैं। स्वयंसहायता

समूह बनाकर महिलाएं दूसरी सैकड़ों महिलाओं को आत्मनिर्भर बना रही हैं। जैसा उल्लेख शुरू में भी किया जा चुका है। केरल में ऐसे स्वयंसहायता समूहों के कारण आज वहां सौ प्रतिशत महिलाएं साक्षर हैं। अपने अधिकारों के लिए सजग हैं। बिहार जैसे पिछड़े राज्यों में ग्रामीण महिलाएं आज स्वयंसहायता समूहों से अपने पैरों पर खड़ी हो रही हैं।

रिसर्च से ये बात भी सामने आई है कि महिलाओं के आत्मनिर्भर बनने से परिवार में खुशहाली और आर्थिक तंगी भी दूर होती है, क्योंकि उस परिवार में अभी तक पुरुष ही कमाते थे और परिवार की बढ़ती जरूरतों को बमुश्किल से पूरा कर पाते हैं। ऐसे में महिलाओं का आत्मनिर्भर बनना, बच्चों को अच्छी शिक्षा और अच्छा पोषण दोनों उपलब्ध होता है। मध्य–प्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में ये तथ्य सामने आए हैं।

महिला सशक्तीकरण की दिशा में पिछले दिनों अनेक प्रत्यक्ष तथा परोक्ष कदम उठाए गए। इसमें स्कूलों, गांवों तथा अन्य स्थानों पर महिला शौचालयों के निर्माण पर विशेष बल दिया जा रहा है। यह महिला सशक्तीकरण तथा उन्हें स्वाभिमान एवं सुरक्षा प्रदान करने की दिशा में बहुत बड़ा कदम है। इससे उन्हें न केवल शारीरिक तथा सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध होगी बल्कि यौन शोषण कम करने में भी मदद मिलेगी। वित्तमंत्री ने अपने बजट भाषण में बताया कि देश में कुल 6 करोड़ शौचालयों के निर्माण का लक्ष्य भी प्राप्त कर लिया जाएगा। इसी तरह 2022 तक गांवों में 4 करोड़ तथा शहरों में 2 करोड़ मकान बनाने की महत्वाकांक्षी योजना से भी महिलाएं लाभान्वित होंगी क्योंकि एक स्थायी छत हर गृहिणी का सपना होता है। सामाजिक सुरक्षा की अन्य अनेक योजनाएं विशेषकर बीमा सुरक्षा योजना भी महिलाओं के सशक्तीकरण में सहायक होंगी।

बजट में महिला कल्याण की योजनाओं के लिए 79,258 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। सरकारी योजनाओं में महिलाओं के लिए धन का प्रावधान सुधारने की दृष्टि से 2005 में लिंग आधारित बजट व्यवस्था यानी जेंडर रिस्पॉन्सिव बजटिंग शुरू की गई। वित्तमंत्री ने 2015–16 के बजट में महिला सुरक्षा को मजबूत बनाने तथा इस सम्बन्ध में समाज में जागरुकता लाने के लिए 16 दिसम्बर, 2012 की घटना के बाद पिछली सरकार द्वारा बनाए गए निर्भया कोष में 1,000 करोड़ रुपये की और अतिरिक्त राशि आवंटित की है। इसी तरह रेलमंत्री ने भी अपने बजट में महिला रेल यात्रियों की सुरक्षा के लिए निर्भया कोष का इस्तेमाल करने का संकेत दिया था। रेलमंत्री ने महिलाओं के लिए एक अलग हेल्पलाइन नम्बर 182 शुरू करने की बात भी कही। बजट में सरकार के एक प्रमुख कार्यक्रम 'बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ' योजना के लिए आवंटन बढ़ाकर 97 करोड़ रुपये कर दिया गया है। इसमें अगले दो–ढाई वर्षों तक 200 करोड़ के निवेश का लक्ष्य है।

'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' जैसी योजना की शुरुआत हरियाणा के शहर पानीपत से की गई क्योंकि हरियाणा में लड़कों के मुकाबले लड़कियों का अनुपात देश में सबसे कम है। हरियाणा में 1,000 लड़कों पर केवल 834 लड़कियां हैं। यह योजना इस मायने में अनूठी है कि इसमें लड़कियों की संख्या में संतुलन लाने के साथ–साथ उनकी शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। शुरू में इसे देश के ऐसे 100 जिलों में लागू किया जा रहा है, जो लिंग अनुपात के मामले में अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े हुए हैं। इस मामले में प्रधानमंत्री का ये तर्क बहुत सार्थक है कि लोग बेटी को तो पढ़ाते नहीं और बहू पढ़ी–लिखी चाहते हैं। जब बेटी नहीं पढ़ेगी तो बहू शिक्षित कहां से आएंगी। बेटियों की उच्च शिक्षा और शादी–ब्याह को लेकर अभिभावक निश्चिंत रहें–इसलिए हाल ही में सरकार ने बेटियों के लिए 'सुकन्या समृद्धि योजना' की शुरुआत की है।

किसी भी देश के विकास संबंधी सूचकांक को निर्धारित करने के लिए उद्योग, व्यापार, खाद्यान्न, उत्पादन, शिक्षा इत्यादि के साथ–साथ उस देश की महिलाओं की स्थिति का भी अध्ययन किया जाता है। आज महिलाएं देश की विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में समान रूप से सहभागी बन रही हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा सेवाओं, आर्किटेक्चर, इंजीनियरिंग जैसे अनेक क्षेत्रों में महिलाओं की सहभागिता अप्रत्याशित तौर पर बढ़ रही है। कॉरपोरेट सेक्टर में जहां दो दशक पहले तक पुरुषों का ही वर्चस्व था वहां आज महिलाएं न केवल अपनी उच्च प्रबंधकीय क्षमता का प्रदर्शन कर रही हैं बल्कि नेतृत्व भी कर रही हैं। सशक्तीकरण की दिशा में भारतीय महिलाओं का कदम अब पुरुषों की बैसाखी का मोहताज नहीं रहा है। देश के पांच बड़ें बैंकों में तीन में शीर्ष पद पर महिलाएं हैं। उन्होंने जिस तरह से अपने बैंकों के कारोबार को आगे बढ़ाते हुए बैंकों को सामाजिक सरोकारों से जोड़ा है, वो वाकई सराहनीय है। वो तेजी से बेहतर फैसले ले रही हैं। एक जमाने में आर्थिक और कारोबारी क्षेत्र में महिलाओं की क्षमता पर शक किया जाता था। लेकिन अब जब महिलाएं यहां सफलता की नई कहानियां लिख रही हैं, तो पूर्वधारणाओं की सारी तस्वीर बदल रही है।

1985 में नैराबी में सम्पन्न अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन में पहली बार महिला सशक्तीकरण शब्द का प्रयोग किया गया। 1993 में बीजिंग में अंतरराष्ट्रीय महिला सम्मेलन में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए आरक्षण की आवश्यकता पर बल दिया गया। इसी दिशा में अपने देश में भी महिलाओं के उत्थान तथा सशक्तिकरण के लिए कई दिशा–निर्देश तथा मानक

तय किए गए, जिनमें महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार तथा सामाजिक सुरक्षा हेतु आधारभूत ढांचा तैयार करना तथा सभी प्रकार की सामाजिक गतिविधियों (सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और यांत्रिक) में समान रूप से भागीदारी बनाना शामिल है। साथ ही जरूरी है कि महिलाओं के प्रति किसी भी प्रकार के यौन उत्पीड़न, भेदभाव, घरेलू हिंसा को रोकने के लिए समुचित कानून बनाए जाएं।

ये 1920 के दशक के आसपास की बात है जब भारत में लड़कियों के लिए पहली बार स्कूल खोले गए। रुढ़िवादियों ने इसका जबर्दस्त विरोध किया। जो परिवार अपनी बेटियों को स्कूल भेजते थे उनका सामाजिक बहिष्कार कर दिया जाता था। सोचिए, समय की प्रतिकूल धारा से संघर्ष करते हुए महिलाओं ने किस तरह आज अपनी एक खास जगह बना ली है। आजादी के बाद जब हिन्दू कोड बिल के जरिए महिलाओं को समानता का असली अधिकार मिल पाया, तब राजनीति से लेकर नौकरियों तक में अपने कदम बाहर निकाले। हालांकि ये सब बहुत मुश्किल था। ये हमारे समाज की रुढ़ियां ही थीं कि जब 1952 में पहले आम चुनाव हुए तो केवल दिल्ली में ढाई लाख महिलाओं ने अपने नाम इसलिए मतदाता सूची में दर्ज नहीं कराए, क्योंकि उनके परिवार या समाज के लोग इसके विरोध में थे।

अब तो हालांकि हालात बहुत बदल गए हैं। हाल में उत्तरप्रदेश में ही ग्राम प्रधानों के चुनाव में 40 फीसदी से ज्यादा महिलाओं ने जीत हासिल की। ये स्त्री सशक्तीकरण की ओर बढ़ रहे कदम की एक स्वाभाविक परिणति है। शायद उसी दिशा में मजबूत प्रयास की राजनीति में महिलाओं को कम से कम 50 फीसदी के अनुपात में दिखना चाहिए। आंकड़े बताते हैं कि संघ लोकसेवा आयोग की परीक्षाओं में अब लड़कियां पहले से कहीं ज्यादा संख्या में चयनित हो रही हैं, वो कहीं ज्यादा प्रशासनिक पदों पर आसीन हो रही हैं। फिल्मों और टीवी के जरिए महिलाएं एक सशक्त छवि बना रही हैं। साथ ही महिलाओं के बीच खास तरह की चेतना और जागरुकता विकसित कर रही हैं। इसी के तहत मीडिया और तमाम न्यूज चैनल की महिला एंकर को भी रखना चाहिए, जिनकी उपस्थिति के चलते महिलाओं के मुद्दों को और संजीदगी के साथ सामने लाया जा रहा है। खेलों में छोटे–छोटे गांवों से किस तरह से महिलाएं निकलकर सशक्तीकरण की अवधारणा को मजबूत कर रही हैं, ये किसी से छिपा नहीं है। ज्यादातर खेलों में अंतर्राष्ट्रीय जगत में भारत का परचम पुरुषों से ज्यादा महिलाएं फहरा रही हैं। विज्ञान के वर्तमान दौर में ई. के.जानकी अमल, असीमा चक्रवर्ती, अर्चना शर्मा, इंद्रिरा नाथ, कस्तूरी दत्ता, आशा कोल्टे आदि भारतीय महिला वैज्ञानिकों ने सराहनीय काम किया है। कल्पना चावला देश में सबसे ज्यादा लकड़ियों की आदर्श हैं और स्पेस साइंस या एयरो–स्पेस इंजीनियरिंग विधा में पढ़ाई कर रही हैं। अनुसंधान का क्षेत्र हो या प्रौद्योगिकी का–हर तरफ महिलाओं के योगदान को देख सकते हैं। रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन यानी डीआडीओ में 20 प्रतिशत महिला वैज्ञानिक हैं जिनकी संख्या निरंतर बढ़ रही है। अन्य वैज्ञानिक संगठनों में भी महिलाओं की भागीदारी बढ़ रही है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए इस साल प्रधानमंत्री की सलाह से भारतीय विज्ञान कांग्रेस के दौरान पहली महिला वैज्ञानिक कांग्रेस का आयोजन किया गया था। आंकड़ों की बात करें तो 1971 में महिला साक्षरता दर 22 प्रतिशत थी जो बढ़ते–बढ़ते 2001 में 54.16 प्रतिशत यानी ढाई गुना हो गई। 2020 में इसके 80 फीसदी से ज्यादा हो जाने की उम्मीद है। शिक्षा और साक्षरता का सीधा रिश्ता सशक्तीकरण से होता है। केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय के राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के तहत 2017 तक देश की 80 प्रतिशत महिलाओं को साक्षर बनाने का लक्ष्य है। महिलाओं में शिक्षा प्रसार के सुखद परिणाम दिखने भी लगे हैं।

उम्मीद है कि आगे आने वाले सालों में जैसे तकनीक और शिक्षा के प्रसार के साथ जागरुकता बढ़ेगी। इसमें भी कोई शक नहीं सरकारी योजनाओं के ईमानदार क्रियान्वयन से स्त्री सशक्तीकरण की गति बढ़ेगी। स्त्री सशक्तीकरण का सीधा रिश्ता देश और समाज की खुशहाली से है। हां, हमें प्रगतिशील विचारधारा को अपनाने के साथ कुरीतियों और अंधविश्वासों की बेड़ियों के खिलाफ लड़ाई लड़ते रहनी होगी।

सशक्तीकरण की प्रतीक ग्रामीण महिलाएं

ग्रामीण भारत ने हाल के बरसों में महिलाओं के जीवट, आगे बढ़ने की ललक और प्रतिभा की छाप छोड़ने की कई मिसालें कायम की हैं। तमाम ऐसी महिलाएं उभर कर सामने आई हैं, जो गांव की दूसरी महिलाओं के लिए रोल मॉडल बनीं और स्त्री सशक्तीकरण की अवधारणा को सही मायनों में आगे बढ़ाया।

सत्यमंगल की ग्रामीण महिलाएं

तमिलनाडु के इस गांव की महिलाएं लंबे समय से उपेक्षित थीं। लेकिन अब मास मीडिया और तकनीक के इस युग में उन्होंने अपने सशक्तीकरण का नया हथियार पा लिया है। वो वीडियो कैमरे के लिए गांव की तमाम समस्याओं और दिक्कतों की फिल्म तैयार करती हैं। इसे अधिकारियों को भेजती हैं। इसका बहुत सकारात्मक असर पड़ा है। गांवों में इसके जरिए कई काम हुए हैं। कुछ साल पहले एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था ने गांव में इसके लिए वर्कशाप की थी जिसमें उन्हें फिल्म मेकिंग के बारे में बताया गया था। ये बताया गया कि किस तरह इसके जरिए वो मजबूत ढंग से उत्पीड़न और अत्याचारों से लड़ सकती हैं और जब वो इन बातों की फिल्म तैयार करेंगी तो इसे अनदेखा करना किसी के लिए भी आसान नहीं होगा। इसके बाद सत्यमंगल की महिलाओं से फिल्म मेकिंग को ढंग से सीखा। उन्होंने तमाम फिल्में बनाईं, जो सराही गईं, जिनका असर हुआ। अब ये महिलाएं इतनी प्रसिद्ध हो चुकी हैं कि उन्हें आसपास के इलाकों में बुलाकर लोग अपनी समस्याएं बताते हैं। वो उसकी फिल्म तैयार करती हैं। केवल यही नहीं वो आसपास के इलाकों की महिलाओं को भी दक्ष कर रही हैं।

अमेरिका में सीईओ बनी भारत की खेतीहर मजदूर

श्रीमती डी ज्योति रेड्डी की कहानी महिला सशक्तीकरण का एक और जबरदस्त उदाहरण है। हैदराबाद के वारंगल में रहने वाली ज्योति ने अपनी सीमाओं का जिस कदर विस्तार किया, वो वाकई अविश्वसनीय लगता है। वो खेतीहर मजदूर के रूप में वर्ष 1989 में महज पांच रुपये की दिहाड़ी पर मजदूरी करती थी। साथ ही पढ़ाई भी। वह अब अमेरिका के केज साफ्टवेयर साल्यूशंस में सीईओ है। वह अब कंपनी के लिए अरबों रुपये कमा रही हैं। लेकिन ज्योति को कभी नहीं भूलता कि वह कहां से ताल्लुक रखती हैं। कैसे वह आगे बढ़कर यहां तक पहुंची हैं। वह ग्रामीण भारत में महिलाओं की सहायता करती हैं और कोशिश करती हैं कि उनके द्वारा किए जा रहे कल्याण कार्यों से महिलाएं अपने पैरों पर खड़ी हो सकें।

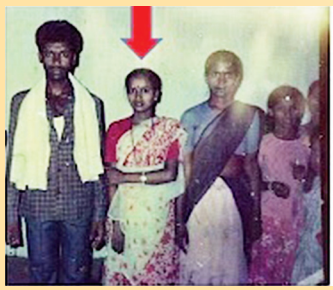

खेतीहर मजदूर (वारंगल) से अमेरिकी कम्पनी में सी.ई.ओ. के पद पर पहुंची सुश्री ज्योती रेड्डी

कल्पना सरोज

कल्पना भी महाराष्ट्र के रुपेखेड़ा गांव के दलित परिवार में पैदा हुईं। उन्होंने कम उम्र में आत्महत्या का भी प्रयास किया। उनकी शादी महज 12 साल की उम्र में कर दी गई थी। पति के परिवार में उन्हें शारीरिक यातनाएं दी गईं। उन्होंने पति के साथ घर छोड़ दिया। फिर वह स्लम्स में रहने लगीं। यहीं उन्होंने अपना जीवन बदला। स्लम्स की महिलाओं को जोड़ा। पहले एक टेलरिंग बिजनेस शुरू किया। फिर एक छोटी गारमेंट फैक्ट्री। इसके बाद एक फर्नीचर स्टोर। अब वह सफल महिला व्यावसायी हैं। ढेर सारी महिलाओं को रोजगार देती हैं। उन्होंने स्लम्स की तमाम महिलाओं और परिवारों की स्थिति बदल दी। कुछ समय पहले उनकी सेवाओं को देखते हुए उन्हें राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने पद्मश्री अवार्ड से सम्मानित किया। इसके बाद वो दुगुने जोश से महिला सशक्तीकरण की अलख जगाने में जुट गईं।

डालिमी पटगिरी, असम

वह असम के एक गांव में पैदा हुईं। गरीब परिवार से ताल्लुक रखने वाली डालिमी ने और गरीब महिलाओं के साथ कच्चे सामानों से घर में इस्तेमाल करने वाली चीजें बनानी शुरू कीं। अब न केवल वो खुद बल्कि उनके साथ काम करने वाली महिलाओं की स्थिति बदल चुकी है। सभी गांव और आसपास के इलाकों में जागरुकता पैदा कर रही हैं। ये सभी महिलाओं में एक नई चेतना और आत्मविश्वास पैदा कर रही हैं। उनका संगठन और बड़ा होता जा रहा है।

हरदामा की सरपंच नौरोती

नौरोती बचपन से ही न्याय की लड़ाई लड़ रही हैं। राजस्थान के किशनगढ़ जिले के हरदामा गांव में नौरोती का जन्म एक दलित परिवार में हुआ। अब वह उसी गांव की सरपंच हैं। पहले तो उन्होंने गांव की महिला मजदूरों के लिए उचित मेहनताने की लड़ाई लड़ी। वह खुद भी पत्थर काटने का काम करती थीं। उनके संघर्ष और जीवट ने साबित कर दिया कि महिलाओं की शक्ति किसी से कम नहीं होती। नौरोती पढ़ी–लिखी नहीं थीं। बाद में उन्होंने हल्का–फुल्का पढ़ना सीखा। अब सरपंच बनने के बाद वह कंप्यूटर पर भी अपना काम खुद करती हैं। साथ ही अपने गांव की तमाम महिलाओं के लिए रोल मॉडल भी हैं।

शेखावटी की लड़कियां

राजस्थान के शेखावटी इलाके के गांवों में जाएंगे तो वहां एक नहीं तमाम उदाहरण ऐसे मिल जाएंगे कि वहां की लड़कियां सेना में तैनाती पा रही हैं। उनमें से कुछ अफसर भी बनी हैं। कुछ जहाज

भी उड़ा रही हैं। कुछ साल पहले जब इंडिया गेट स्थित राजपथ पर गणतंत्र दिवस की परेड हुई तो स्नेहा शेखावत ने वायुसेना की टुकड़ी का नेतृत्व किया था। इस खास मौके पर सेना की किसी टुकड़ी की अगुआई करने वाली वह देश की पहली महिला सैन्य अधिकारी थीं। उनके परिवार की जड़ें शेखावटी के गांवों में हैं। उनकी इस सफलता ने शेखावटी के गांवों की तमाम लड़कियों को सेना में आने के लिए प्रेरित किया। इन्हीं में एक वीणा सहारण भी हैं। वह आज आइएल–76 नाम का जहाज उड़ा रही हैं। इस विमान को उड़ाने वाली वे देश की पहली महिला पायलट हैं। पहले इस जहाज को पुरुष पायलट ही उड़ाया करते थे। इसकी वजह भी है: आइएल–76 का वजन 190 टन होता है और यातायात के हिसाब से यह देश का सबसे बड़ा जहाज है। वह शेखावाटी के चूरू जिले के रतनपुरा गांव से ताल्लुक रखती हैं। उनके परिवार के कई लोग पहले से सेना में हैं।

वीणा कहती हैं, लड़कियां चाहे शहर की हों या गांव की, प्रतिभा सब में होती है। जरूरत बस परिजनों से थोड़ा–सा प्रोत्साहन मिलने की होती है।

शेखावटी की देखादेखी में पड़ोसी जिले में जागरुकता फैल रही है। सीकर से सटे नागौर जिले के डीडवाना के छोटे गांव भवादिया की 27 वर्षीया दीपिका राठौड़ ने माउंट एवरेस्ट पर चढ़ाई की। वह एनसीसी अव्वल कैडेट थीं। अब सेना में अधिकारी हैं। राजस्थान के तमाम ऐसे गांव हैं, जहां कई महिलाओं ने स्त्री सशक्तीकरण की सही मायने में मिसाल कायम की है।

तरनतारन की लड़कियां

पंजाब के जिला तरनतारन के गांव पंडोरी सिधवां को सैनिकों का गांव कहा जाता है। यहां के कई युवक सेना, बीएसएफ, सीआरपीएफ और पंजाब पुलिस में बड़े पदों पर तैनात हैं। महज 3500 की आबादी वाले इस गांव में अब लड़कियां भी सेना और पुलिस में भर्ती होने की तैयारी में जुटी हैं। कुछ सेलेक्ट हो चुकी हैं और गांव व आसपास के इलाकों के लिए रोल मॉडल का काम कर रही हैं।

केरल के गांव के किसान का सपना हुआ सच

केरल के एक गांव के किसान ने सपना देखा था कि उसकी बेटी आईएएस बने। इसी सपने के साथ उसने अपनी बेटिंयों को बेहतरीन शिक्षा दी। करीब तीन साल पहले उस किसान की एक बेटी एनीज कनमणि जॉय जोकि सिविल सेवा परीक्षा 2012 पास करने में कामयाब रहीं। एनीज ने ना सिर्फ 2012 में परीक्षा पास की बल्कि 65वां रैंक भी हासिल किया। ऐसा नहीं है कि एनीज ने ये पहली बार किया हैं। 2011 में भी एनीज ने सिविल सेवा पास की थी। वह कहती हैं, 'ग्रामीण पृष्ठभूमि खास मायने नहीं रखती। मायने रखता है कि आप में कितना दम है।'

अंजुम की कहानी भी कुछ कम नहीं

आईपीएस अंजुम आरा का जन्म लखनऊ के आजमगढ़ के छोटे से गांव कम्हरिया में हुआ। अब वह देश की दूसरी मुस्लिम महिला आईपीएस हैं। जब पढ़ाई पूरी करने के बाद आईपीएस बनने की इच्छा पिता को बताई तो उन्होंने हौंसला–अफजाई की। लेकिन परिवार के

हरदामा की सरपंच नौरती

बाकी सदस्य इससे खुश नहीं थे। रिश्तेदारों को तो उसका घर से निकलना तक गंवारा नहीं था। अंजुम कहती हैं कि उनके परिवार में आज भी पर्दाप्रथा जारी है। कड़ी मेहनत और लगन से 2011 में उनका चयन आईपीएस के लिए हो गया।

पुष्पा मैत्रेई

साहित्य जगत में पुष्पा मैत्रेई का नाम किसी के लिए भी अनजाना नहीं है। उनका जन्म बुंदेलखंड के एक गांव में हुआ था। शुरुआती शिक्षा भी गांव में हुई। जब उन्होंने हाईस्कूल कर लिया तो इंटर के लिए पास के कस्बे में जाना पड़ा। वह रोज 15–20 किलोमीटर जाती आती थीं। इसी तरह जब उन्होंने कॉलेज की पढ़ाई शुरू की तो भी ये उनके लिए आसान नहीं थी। लेकिन उन्होंने अपनी दृढ इच्छा शक्ति से यह कर दिखाया। उनका साहित्य जहां आमतौर पर ग्रामीण जिंदगी के इर्द – गिर्द घूमता है वहीं वह महिलाओं के सशक्तीकरण की चेतना भी जागृत करता है। बल्कि उनके पात्र आमतौर गांव से ही लिए गए ऐसे पात्र होते हैं, जो बदलाव के वाहक बन रहे हैं। वह कहती हैं कि मौजूदा सालों में गैस के चूल्हों और मोबाइल फोन ने महिलाओं की तस्वीर बदलने में सबसे बड़ी भूमिका अदा की है।

तीजन बाई

तीजन बाई को अब कौन नहीं जानता। वह भिलाई के गांव गनियारी में पैदा हुईं। वह बचपन में महाभारत की कहानियां सुनतीं और इस पर आधारित गाने सुनतीं। कम उम्र में वह मंच पर इसका प्रदर्शन करने लगीं। उन्होंने पंडवानी गायकी की अपनी शैली विकसित की जो बहुत लोकप्रिय हुई। पंडवानी लोक गीत–नाट्य की पहली महिला कलाकार हैं। देश–विदेश में अपनी कला का प्रदर्शन करने वाली तीजनबाई को बिलासपुर विश्वविद्यालय द्वारा डी लिट की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया है। वह 1988 में पद्मश्री और 2003 में कला के क्षेत्र में पद्मभूषण से अलंकृत की गईं। तमाम और भी राष्ट्रीय अवार्ड से उन्हें सम्मानित किया जा चुका है। वह छत्तीसगढ में नए तरह की जागरुकता पैदा कर रही हैं। ढेर सारी लड़कियां उनसे पंडवानी सीखती हैं और देश–विदेश में उसका प्रदर्शन करती हैं। कहा जा सकता है कि छत्तीसगढ की आदिवासी लड़कियों को उन्होंने नई ताकत दी है और उनकी पहचान के रूप में उभरी हैं।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।)

'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' बालिकाओं को सशक्त करने की अनूठी पहल

—सोनी कुमारी

बालिका सशक्तीकरण एक ऐसा महत्वपूर्ण सामाजिक घटक है जिसको समझने के लिए हमें अपने पारिवारिक ढांचे सहित उसके बहुआयामी प्रभाव पर मनन करना होगा। जनगणना 2011 से एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह निकलता है कि देश में स्त्री और पुरुष का अनुपात संतुलित नहीं है। इससे भी अधिक चिंता की बात यह है कि शून्य से छः वर्ष की आयु तक के बच्चों में भी लिंगानुपात लड़कों के पक्ष में झुका हुआ है, लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की संख्या कम है। संतुलित जनसंख्या के लिए काम करना एक बड़ी चुनौती है। यदि मौजूदा पूर्वाग्रहों पर विजय प्राप्त करनी है तो बालिकाओं के अधिकारों की रक्षा करनी होगी। उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, कौशल विकास और निर्णय लेने के अवसर के साथ-साथ कानूनी अधिकार भी प्रदान करने होंगे ताकि वे सही अर्थों में सशक्त और समर्थ बन सकें।

आज देश की कुल आबादी में महिलाओं की संख्या करीब 48 प्रतिशत है। इसका एक बड़ा हिस्सा अपने मूलभूत अधिकारों से भी वंचित है, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में। आज देश में ऐसी महिलाओं की संख्या बहुत अधिक है जो शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक अवसर जैसे कई क्षेत्रों में पुरुषों के मुकाबले निम्न दशा में हैं। इसके अतिरिक्त महिलाओं के प्रति जन्म से मृत्युपर्यन्त हिंसा की घटनाएं आम हैं। महिलाओं के प्रति हिंसा का सबसे घिनौना पक्ष यह है कि उनके प्रति दोयम दर्जे की सामाजिक मानसिकता के कारण बेटियों को जन्म के दौरान, पूर्व या पश्चात् मार दिया जाता है। अशिक्षित समाजों की यह बुराई अब शिक्षित समाजों में भी बड़े स्तर पर फैल चुकी है। इतना ही नहीं सामाजिक प्रतिष्ठा का नाम देकर महिलाओं को कई प्रकार से प्रतिबंधित करना और उनका शोषण करने की एक बड़ी कुरीति समाज में प्रचलन में है।

हरियाणा में स्त्री–पुरुष का अनुपात 1000 : 857 हैं और पंजाब में अनुपात 1000 : 863 है। इन दोनों राज्यों का अनुपात राष्ट्रीय 919 से काफी कम है। बिहार और गुजरात की स्थिति इनसे बेहतर है, जहां प्रति 1000 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या 909 है। ऐसा नहीं है कि यह संतुलन एक दिन में बिगड़ा है। इसके पीछे कारण रहे हैं। इन क्षेत्रों में भ्रूण हत्या आम थी और वह दौर भी अभी लोगों को भूला नहीं है जब लड़कियों को जन्म लेने के बाद ही मार दिया जाता था। विभिन्न राज्यों के स्त्री–पुरुष अनुपात की विवरणी तालिका में दी गई है।

जनगणना में घटता लिगांनुपात

इसमें अन्य बातों के साथ–साथ, जो एक विचारणीय और गंभीर तथ्य प्रकाश में आया था, वह 0–6 आयु वर्ग के बीच लिंगानुपात में तेजी से गिरावट से संबंधित था। वर्ष 2001 में कुल जनसंख्या का करीब 16 प्रतिशत बच्चे 0–6

क्रम सं0	राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	2011 जनगणना		2001 जनगणना	
		लिंगानुपात	बच्चियों का लिंगानुपात	लिंगानुपात	बच्चियों का लिंगानुपात
	भारत	943	918	933	927
	केरल	1084	964	1058	960
	पुदुचेरि	1037	967	1001	967
	तमिलनाडु	996	943	987	942
	आन्ध्र प्रदेश	993	939	978	961
	छत्तीसगढ़	991	969	989	975
	मेघालय	989	970	972	973
	मणिपुर	985	930	974	957
	उड़ीसा	979	941	972	953
	मिजोरम	976	970	935	964
	गोआ	973	942	961	938
	कर्नाटक	973	948	965	946
	हिमाचल प्रदेश	972	909	968	896
	उत्तराखण्ड	963	890	962	908
	त्रिपुरा	960	957	948	966
	आसाम	958	962	935	965
	पश्चिम बंगाल	950	956	934	960
	झारखण्ड	948	948	941	965
	लक्षद्वीप	946	911	948	959
	अरुणाचल प्रदेश	938	972	893	964
	नागालैण्ड	931	943	900	964
	मध्य प्रदेश	931	918	919	932
	महाराष्ट्र	929	894	922	913
	राजस्थान	928	888	921	909
	गुजरात	919	890	920	883
	बिहार	918	935	919	942
	उत्तर प्रदेश	912	902	898	916
	पंजाब	895	846	876	798
	सिक्किम	890	957	875	963
	जम्मू और कश्मीर	889	862	892	941
	हरियाणा	879	834	861	819
	अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह	876	968	846	957
	दिल्ली	868	871	821	868
	चण्डीगढ़	818	880	777	845
	दादर और नगर हवेली	774	926	812	979
	दमन और दीव	618	904	710	926

स्रोत : जनगणना रिपोर्ट, 2011

आयु वर्ग के थे, लेकिन 2011 की जनगणना में इनकी संख्या घटकर 13 प्रतिशत हो गई। इसलिए आजादी के बाद से अब तक लिंगानुपात सबसे निचले स्तर पर पहुंचना न केवल देश के लिए चिंता का विषय है, बल्कि यह एक राष्ट्रीय शर्म की भी बात है। 2001 की जनगणना में जहां यह अनुपात प्रति 1000 लड़कों के पीछे 927 लड़कियां थी, वहीं 2011 की जनगणना में घटकर 919 हो गया। यही नहीं हरियाणा के झज्जर जिले में सर्वाधिक कम लिंगानुपात यानी 1000 लड़कों के पीछे मात्र 774 लड़कियां हैं। हरियाणा राज्य में इस असमान लिंगानुपात के कारण से वहां के लोगों को अपने लड़कों हेतु पत्नी की खोज में पश्चिम बंगाल, असम और केरल के सुदूर इलाकों में भटकना पड़ रहा है। इस प्रकार यह असमान लिंगानुपात परिवार के अस्तित्व के लिए भी खतरा बन रहा है।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने देश में बालकों की तुलना में बालिकाओं की कम संख्या की समस्या को दूर करने के लिए हरियाणा के पानीपत से 22 जनवरी, 2015 को 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' अभियान की शुरुआत की। श्री मोदी ने आश्चर्य व्यक्त किया कि लोग पढ़ी–लिखी बहू घर में लाना चाहते हैं, लेकिन अपने बेटियों को शिक्षा दिलाने से पहले कई बार सोचते हैं। इसलिए लोगों को इस दोहरी मानसिकता को भी छोड़ना होगा। मोदी ने इस योजना का उद्देश्य संबंधित कानून को कड़ाई से लागू करके इसका उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कड़ी सजा की व्यवस्था का भी उल्लेख किया ताकि लोग लड़के–लड़कियों में भेदभाव न कर सकें। देश भर के सौ जिलों को चिन्हित करके यह योजना शुरू की गई। अगर इस पर नियमित नजर रखी गई तो इसकी सफलता में संदेह का कोई कारण दिखाई नही देता। लेकिन ऐसी किसी भी योजना की वास्तविक सफलता तभी संभव है, जब जनता खुद को उससे जुड़ा महसूस कर सके और यह तभी होगा जब समाज अपनी बेटियों की जिदंगी और उनके मान–सम्मान की सुरक्षा के प्रति निश्चिंत हो सके। सरकार को इन बातों पर ध्यान देना चाहिए। अगर बेटियों के लिए अच्छा माहौल बनाया जा सके तभी बालिकाओं का सशक्तीकरण संभव है।

बालिका विकास पर भारत सरकार की नीति में स्वतंत्रता के बाद से अनेक परिवर्तन हुए हैं। सबसे उल्लेखनीय परिवर्तन पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान आया जब बालिकाओं के कल्याण से हटकर बालिकाओं के विकास पर जोर देने की नीति अपनाई। आठवीं योजना में पुनः विकास प्रक्रिया में बालिकाओं को समान भागीदार बनाने पर जोर दिया गया। आज, समावेशी विकास पर हमारा ध्यान केन्द्रित है। ऐसे में बालिकाओं के सशक्तीकरण के प्रति हमारी जागरुकता में और वृद्धि हुई है। समाज के निचले स्तर से बालिकाओं का सशक्तीकरण होना चाहिए और इसके लिए उनके प्रति मूल्यों और व्यवहार में परिवर्तन के साथ–साथ उन्हें आर्थिक रूप से समर्थ बनाने की आवश्यकता है। स्पष्ट है कि सभी समस्याएं असमानता के इर्द–गिर्द घूमती हैं। इसलिए बालिकाओं के साथ अच्छा व्यवहार, समानता और देश के विकास में उनकी पूरी सहभागिता के लिए कदम उठाने आवश्यक हैं।

'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' अभियान के उद्देश्य

- लिंग भेद से पूर्वाग्रसित मनोवृत्ति को समाप्त करना।
- बालिका की उत्तरजीविता और संरक्षण सुनिश्चित करना।
- बालिका के लिए शिक्षा सुनिश्चित करना।

- बालिका की पोषण स्थिति में सुधार करना।
- बालिका के लिए संरक्षण माहौल को प्रोत्साहन देना।

बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' अभियान का कार्यक्षेत्र

फिलहाल कम लिंगानुपात वाले देश के गुजरात, हरियाणा, पंजाब और महाराष्ट्र राज्य के 100 जिलों को 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' अभियान के लिए चयनित किया गया है। इन जिलों में कानूनी सख्ती, सामाजिक जागरुकता आदि के द्वारा कन्या भ्रूण हत्या रोकने का प्रयास किया जा रहा है। इस दौरान अगर यह योजना सफल होती है तो आगे इसका विस्तार अन्य राज्यों में किया जाएगा।

'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' के अंतर्गत सुकन्या समृद्धि योजना की भी घोषणा की गई है। यह बालिका के लिए एक लघु बचत योजना है, जिसमें 9.1 प्रतिशत की दर से ब्याज की व्यवस्था के साथ यह योजना आयकर से मुक्त है 2015–16 के लिए 9.2 प्रतिशत वार्षिक की ब्याज दर घोषित की गई है। इस योजना के पीछे की मंशा मुख्य रूप से परिवार के संसाधनों और बचतों में बालक की भांति बालिका के लिए भी साम्यपूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करना है, ताकि परिवार में बालक–बालिका के बीच का भेदभाव समाप्त हो सके। प्रधानमंत्री ने बालिका के जन्म के समय 5 पेड़ लगाने का भी आह्वान किया और उन्हें बालिका के विवाह के समय काटने की सलाह दी ताकि इससे बालिका के विवाह के समय होने वाले खर्चे की कुछ हद तक पूर्ति हो सके। इस प्रकार 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' योजना का उद्देश्य जहां देश में भ्रूण हत्या को खत्म करना है, तो वहीं सुकन्या समृद्धि खाता योजना के तहत् बेटियों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने का लक्ष्य निर्धारित है।

कन्या भ्रूण हत्या की रोकथाम के लिए बने कानून और उनका कार्यान्वयन

स्मरण रहे कि देश में कन्या भ्रूण हत्या और शिशु हत्या रोकने के लिए भारतीय दण्ड विधान की धारा 315 और 316 में व्यवस्था है। जहां कुछ विशेष परिस्थितियों में जैसे गर्भवती महिलाओं को जीवन से खतरा होने की स्थिति में गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम की व्यवस्था है, तो वहीं दूसरी ओर प्रसव पूर्व नैदानिक परीक्षण (दुरुपयोग का विनियमन और रोकथाम) अधिनियम, 1994 1 जनवरी, 1996 से प्रभावी बनाया गया, जिसमें प्रसव–पूर्व लिंग परीक्षण को अपराध की श्रेणी में रखते हुए सजा का भी प्रावधान किया गया। इस प्रकार यह कानून गर्भस्थ शिशु के लिंग परीक्षण पर प्रतिबंध लगाकर कन्या भ्रूण हत्या को रोकता है और सभी क्लीनिकों, अस्पतालों में जन्म–पूर्व लिंग परीक्षण को कानूनी जुर्म बताकर इसकी मनाही है और इस बाबत नोटिस चिपका दिया जाता है, लेकिन इसके बावजूद चोरी–छिपे कन्या भ्रूण हत्या की घटनाएं देखने को मिल ही जाती हैं। इसका एक कारण यह भी है कि कानून की सख्ती के साथ ही दिन–प्रतिदिन उच्च तकनीक भी विकसित हो रही है।

अल्ट्रासाउंड मशीन की जगह अब जेनिसिलेक्टि किट कैमरा, एमआरआई तथा मोबाइल फोन आकार के अल्ट्रासाउंड सिस्टम बाजार में आ गए हैं। इनसे लिंग परीक्षण में कोई दिक्कत नहीं आती। गांवों में मोबाइल सोनोग्राफी उपलब्ध है, जो शिशु हत्या से भ्रूण हत्या की ओर जा रही है। इसलिए पीसीपीएनडीटी एक्ट में नये सिरे से संशोधन कर उसमें और कड़ी सजा का प्रावधान करना नितांत आवश्यक है। साथ ही प्रत्येक अल्ट्रासाउंड क्लीनिकों तथा मशीनों का पंजीकरण हो और समय–समय पर अचानक निरीक्षण की व्यवस्था भी हो, ऐसा करने पर 3 से 5 साल तक कारावास व अधिकतम एक लाख रुपये जुर्माने की सजा का भी प्रावधान किया गया है। लेकिन इस कानून के लागू होने के बावजूद भी 21 वर्ष बाद आज भी कन्या भ्रूण हत्या जारी है। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि सरकार ने बदलती परिस्थितियों और लिंग परीक्षण के नये–नये आविष्कारों को ध्यान में रखते हुए उसके अनुरूप इस कानून में न तो संशोधन किया और न ही इसकी मॉनीटरिंग की समुचित व्यवस्था की। इसलिए इस कानून को नये सिरे से परिभाषित करना समय की मांग है, राज्य सरकारों को भी इस दिशा में उपयुक्त कदम उठाने होंगे।

कैसे बचेंगी और पढ़ेंगी बेटियां ?

पहले भी सरकारें 'बेटा–बेटी एक समान' का नारा देती रही हैं। एक ओर हिमालय में 'बेटी है अनमोल' जैसी योजना, मध्य प्रदेश की 'लक्ष्मी लाडली', और 'कन्यादान योजना', तथा हरियाणा की 'बालिका सुरक्षा योजना' जैसी कई योजनाएं वर्तमान में संचालित की जा रही हैं। लेकिन इन सबके बावजूद कन्या भ्रूण हत्या की घटनाओं की रोकथाम में आशानुरूप प्रगति नहीं दिखाई दी है और देश के विभिन्न इलाकों में लिंगानुपात में न तो खास सुधार देखने में आया और न ही देश में बेटियों की दशा ही सुधरी है। इसलिए कन्या भ्रूण हत्या की इस समस्या से निजात पाने हेतु मौजूदा कानूनी प्रावधानों में बदलते परिप्रेक्ष्य में संशोधन करते हुए उनका सख्ती से पालन करने के साथ ही लोगों के बीच सामाजिक जागरुकता फैलानी जरूरी है। गांवों में पंचायती राज संस्थाओं की भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

कुछ समय पहले केन्द्र सरकार ने गर्भावस्था के दौरान बच्चे के लिंग का पता लगाने के लिए प्रयोग किए जा रहे नये तरीकों

की जांच और कन्या भ्रूण हत्या की प्रवृत्ति पर रोक लगाने के लिए एक विशेषज्ञ समिति बनाने का फैसला किया था। हम चाहेंगे कि उस पर शीघ्र अमल हो, साथ ही मौजूदा कानून को बेहतर ढंग से लागू करने के लिए राज्यों को भी लिखा जाए। यह भी उल्लेखनीय है कि लिंग समानता तथा नारी सशक्तीकरण एक सिक्के के दो पहलू हैं। यदि नारी सशक्त है, तो वह निश्चित तौर पर अपने विरुद्ध होने वाली हिंसा जिसमें उसके गर्भ में पल रहे लिंग परीक्षण भी शामिल हैं, का विरोध कर सकती है। हमारा यह भी मत है कि देश की आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाली महिला का यदि सच्चे अर्थों में सरकार सर्वोमुखी विकास करना चाहे, तो उन्हें संसद, विधानसभाओं तथा पंचायतों के अंतर्गत कम–से–कम 33 प्रतिशत की आरक्षण व्यवस्था करनी होगी। साथ ही संसद में इस बात लंबित बिल शीघ्र पारित हो।

इसमें दो राय नहीं कि बालिका के जन्म लेने के अधिकार की हर कीमत पर रक्षा सुनिश्चित हो। कन्या भ्रूण हत्या के विरुद्ध न्यायिक प्रणाली को और अधिक संवेदनशील बनाने हेतु सर्वोच्च तथा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की उपस्थिति में कार्यशालाओं के आयोजन से भी सहायता मिल सकती है। यहां एक सुझाव यह भी दिया जा सकता है कि केन्द्र तथा राज्य सरकार संबंधित मंत्रालय में कन्या भ्रूण हत्या की रोकथाम हेतु एक ऐसे प्रकोष्ठ में विशेष रूप से उन महिलाओं को शामिल किया जाए जिन्होंने विपरीत परिस्थितियों तथा पुरुष मानसिकता का दंश सहने के बावजूद समाज में अपने लिए एक स्थान बनाया। रोल मॉडल के रूप में ये महिलाएं मीडिया, समाचार–पत्र तथा पत्रिकाओं के द्वारा समाज के समक्ष आएं और स्वयंसेवी संस्थाओं का सहयोग लेकर विचार गोष्ठियां, रोड शो, रैलियों, नाटक और नुक्कड़ नाटकों का आयोजन करते हुए 'बेटी बचाओ' के अभियान पर अपने को फोकस करें, तो इससे बालिका के पक्ष में निःसंदेह एक स्वस्थ माहौल बनाने में सहायता मिलेगी।

हरियाणा तथा पंजाब में बालिकाओं के प्रति भेदभाव चरम पर है, परन्तु 2011 की जनगणना से यह तथ्य भी प्रकट हुआ कि अब मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, ओडिशा तथा जम्मू–कश्मीर भी उक्त दो राज्यों की राह में चलने को अग्रसर हैं। समग्र तौर पर देश के 27 राज्यों में लिंगानुपात का स्तर गिरा है, मात्र 6 राज्यों में लिंगानुपात में सुधार दिखाई दिया है। सबसे बेहतर लिंगानुपात मिजोरम (1000 : 971) और मेघालय (1000 : 970) में देखा गया। उत्तरी राज्यों में हिमाचल प्रदेश को छोड़कर किसी भी राज्य में 900 से ऊपर का बाल लिंगानुपात नहीं देखा गया। इसलिए देश में घटते लिंगानुपात की इस स्थिति में 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' योजना की शुरुआत

करना निश्चित तौर पर एक सराहनीय कदम है और इससे असमान लिंगानुपात की तस्वीर बदलने की उम्मीद है।

आंकड़े बताते हैं कि भारत में पुरुषों के मुकाबले बालिकाओं की स्थिति चिंतनीय है। अतः सच्चाई को ढकने से काम नहीं चलेगा। प्रतीकवाद और बहानों का सहारा लिए बिना हमें आगे आकर समस्या का समाधान करना होगा। परन्तु केवल सरकारी हस्तक्षेप से काम नहीं बनेगा। बेहतर परिणाम तभी प्राप्त होंगे जब दृढ़ प्रतिज्ञ बालिकाएं स्वयं अपने–आप को सशक्त बनाने का प्रयास करेंगी और इसमें उन्हें समाज के प्रबुद्ध वर्ग का प्रोत्साहन मिलेगा।

गौरतलब है कि इस वर्ष सितम्बर में संयुक्त राष्ट्र वैश्विक विकास के लक्ष्यों के एक नये सैट की घोषणा की गई और उसमें भारत की तरफ से भी हस्ताक्षर किए गए हैं। इसलिए भारत ने उसमें लिंग समानता की अपनी प्रतिबद्धता को भी व्यक्त किया है। इससे न केवल भारत में बल्कि विश्व समुदाय के प्रति भी महिलाओं के सशक्तीकरण की दिशा में एक सकारात्मक संदेश दिया जा रहा है।

(स्वतंत्र पत्रकार एवं शोधार्थी,
इतिहास विभाग, ल.ना.मि.वि.वि. दरभंगा)
ई–मेल: sonikumari4284@gmail.com

एक कदम स्वच्छता की ओर

स्वच्छता और बालिका सशक्तीकरण

—अनुपमा जैन

स्वच्छ भारत अभियान हो या निर्मल भारत अथवा मध्य प्रदेश सरकार का मर्यादा अभियान, स्वच्छता के लिए देशभर में छिड़ी इसी मुहिम की सकारात्मक बात यह है कि इससे स्वच्छता के प्रति जागरुकता बढ़ी है, और इसे सही दिशा में एक बढ़ता कदम माना जा रहा है। खासतौर पर यह महिला अधिकार सम्पन्नता की दिशा में एक महत्वपूर्ण स्तंभ बन गया है, और वह दिन दूर नहीं जब घूंघट काढ़े किसी नवविवाहिता को खुले में शौच जाने के लिये मजबूर नही होना पड़ेगा, घर की कोई बेटी-बहू पीले पड़ते जा रहे चेहरे से शौच जाने के लिये शाम का इंतजार नहीं करेगी और किसी किशोरी का स्कूल वहां शौचालय नहीं होने की वजह से छुड़वा नहीं दिया जाएगा।

नई दिल्ली, 7 दिसंबर, दृश्य एक... घबराहट से भरी एक नवविवाहिता थर्राई आवाज मे अपने ससुराल में जाने से इसीलिए इंकार कर देती है कि वहां शौचालय नहीं है...दृश्य दो... एक लडकी अपने विवाह पर पिता से साड़ी गहने और तोहफे लिये जाने से इंकार कर देती है और कहती है आप गहनों, कपड़ों के बजाय बिना शौचालय वाले मेरे ससुराल मे शौचालय बनवा दो... दृश्य तीन... किशोरावस्था में कदम रखती बालिका को जब उसकी मां स्कूल में शौचालय नहीं होने की बात कहते हुए स्कूल की आगे की पढ़ाई छोड़ने के लिये कहती है तो दृढ़–प्रतिज्ञ बच्ची उन पर भावनात्मक दबाव बनाती है कि वे स्कूल प्रशासन पर दबाव डाल कर स्कूल में शौचालय बनाने और उसकी सफाई की व्यवस्था पर जोर डाले ताकि वे और उस जैसी कितनी ही बालिकाओ को स्कूल की पढ़ाई बीच में ही नहीं छोड़नी पड़े और अन्ततः तमाम अभिभावकों के दबाव के बाद स्कूल मे शौचालय बन जाता है और हंसती,खिलखिलाती आत्मविश्वास से भरी बच्चियां अब उस विद्यालय में बेफिक्री से अपने भविष्य को रोशन बनाने के लिये जी–तोड़ मेहनत कर रही हैं।

पिछले कुछ समय से देश में एक 'मौन क्रांति' हो रही है, क्रांति है महिलाओं को स्वच्छता के प्रति जागरूक बनाना, उन्हें स्वच्छता के लिए अधिकार–सम्पन्न बनाना या यूं कहे यह जागरुकता उन्हें स्वास्थ्य के अपने बुनियादी अधिकारों के प्रति सजग कर रही है। कहा जाता रहा है कि स्त्री शिक्षा महिला सशक्तीकरण का मजबूत आधार है और आज तेजी से हर शिखर को छू रही महिलाओं की सफलता के पीछे 'शिक्षा'एक सर्वाधिक बड़ी वजह है, लेकिन इसके साथ यह भी जरूरी है कि महिला स्वस्थ हो। आंकड़ों के अनुसार पिछले कुछ समय से देश में माध्यमिक–स्तर

पर स्कूली पढ़ाई बी्च मे छोड़ देने वाली लड़कियों के संख्या में निरंतर कमी आ रही है। यही नहीं एक सर्वेक्षण के अनुसार इस दौरान प्राइमरी स्कूलों में लड़कियों के दाखिले में 12 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। वहीं उच्च्तर माध्यमिक–स्तर पर यह वृद्धि 8 प्रतिशत दर्ज की गई। विशेषज्ञों का मानना है कि 'स्वच्छ भारत अभियान से न केवल सफाई राष्ट्र के विकास एजेंडा की सूची मे शीर्ष पर आ गयी है बल्कि यह स्वच्छता अभियान विशेष तौर पर बालिका सशक्तीकरण की दिशा में अहम योगदान दे रहा है और यही मौन क्रांति देश मे एक नई आशा का संचार कर रही है।

गौरतलब है कि प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने गत वर्ष गांधी जयंती पर 'स्वच्छ भारत अभियान' की शुरुआत की। इस अभियान के तहत 2019 तक देश को स्वच्छ बनाने का लक्ष्य तय किया गया है। इसके तहत अगले पांच वर्षों में यानी 2019 तक स्कूलों विशेष तौर पर बालिकाओं के विद्यालयों में शौचालय बनाने के साथ 1.04 करोड़ परिवारों के लिए शौचालय बनाने का लक्ष्य रखा गया है। इसके तहत 2014–15 तक 50 लाख शौचालय बना भी लिए गए हैं।

इस तरह के अभियानों का असर बालिका सशक्तीकरण के क्षेत्र मे साफतौर पर दिख रहा है। वर्ष 2005–06 में जहां लड़कियों के स्कूलों में मात्र 37 प्रतिशत ही शौचालय थे वहीं पिछले वर्ष यह संख्या 93 प्रतिशत तक पहुंच गई। लड़कियों के प्राइमरी–स्तर पर ही शिक्षा बीच में ही छोड़ देने के पीछे अन्य समाजिक–आर्थिक वजहों के साथ बालिका स्कूलों में शौचालय तथा उनमें पानी नहीं होने और सफाई के इंतजाम नहीं होना एक बड़ी वजह है। वर्ष 2013–14 में ग्रामीण क्षेत्रों में जहा उच्चतर–स्तर की शिक्षा में स्कूल छोड़ने वाली लड़कियों की संख्या 22.31 थी, वहीं अब हालात बदल रहे हैं। न केवल विद्यालयों मे दाखिले के लिए आने वाली लड़कियों की संख्या बढ़ रही है बल्कि सफाई के प्रति जागरुकता उन्हें स्वस्थ बनाने के साथ आत्मविश्वास से भरा नागरिक भी बना रही है। वे अपने आसपास के माहौल को साफ–सुथरा बना रही हैं, स्कूलों में तथा विद्यालयों में शौचालय बनाने पर जोर दे रही हैं। यह एक कटुसत्य है कि 67.3 प्रतिशत ग्रामीण परिवार (करीब 11.3 करोड़) शौचालय की सुविधा का फायदा नहीं उठा पाते। एक जाने–माने शिक्षाशास्त्री के अनुसार इस तरह के अभियान सामाजिक चेतना को जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, इसके लिए सिर्फ सरकार की ओर देखने की बजाय आम आदमी जिस तरह से स्वच्छता की अहमियत को नये सिरे से समझ रहा है, समुदाय इस अभियान से जुड़ रहे हैं वह ही इस तरह की अभियानों की सफलता का सूचक होता है।

यूनिसेफ के आंकड़ों के अनुसार आजादी के तकरीबन 68 साल बाद, आज भी भारत में लगभग 60 करोड़ लोग यानी लगभग आधी आबादी खुले में शौच के लिये जाती है, हालांकि राहत की बात यह है कि इस बारे में उठाए गए कदमों की वजह से भारत में पिछले वर्षों में 30 प्रतिशत की कमी आयी है। लेकिन निश्चय ही महिलाओं एवं बच्चियों द्वारा खुले में शौच करने की मजबूरी हमारे लिए बेहद शर्मिंदगी की बात है। आलम यह है कि अनेक गर्भवती माताएं, किशोरियां पेट भर खाना महज इसलिए नहीं खाती हैं क्योंकि वक्त–बेवक्त शौच जाने जैसी बुनियादी सुविधा उन्हें हासिल नहीं हैं। नतीजतन न केवल गर्भवती माताओं के गर्भ में पल रहा बच्चा तक कुपोषण का शिकार हो जाता है, बल्कि किशोरियां भी कुपोषण व अन्य बीमारियों की शिकार हो जाती हैं, और फिर महिलाएं अगर साफ–सुथरे माहौल में बच्चे को जन्म देंगी, उसका पालन करेंगी तो अपने साथ देश की भावी पीढ़ी को भी उज्जवल भविष्य देंगी और राष्ट्र को मजबूती देंगी। यहां यह सोचना होगा कि भारत में जनसंख्या तो बड़ी तादाद में बढ़ रही है, पर बदकिस्मती यह हैं कि इस बढ़ती हुई जनसंख्या में लड़कियों का अनुपात कम होता जा रहा हैं। जहां वर्ष 2001 में की गई गणना के मुताबिक प्रति 1000 लड़कों में 927 लड़कियां थी, वहीं 2011 में आंकड़ा लुढ़क कर 919 हो गया है।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी खुद साफ–सफाई को लेकर 'स्वच्छ भारत अभियान' पर काफी जोर देते रहे हैं। सरकार का यह ऐलान इसी दिशा में एक कदम माना जा रहा है। महात्मा गांधी शौचालय को 'सामाजिक बदलाव के औजार' के तौर पर देखते थे। गांधीजी को एक प्रेरणा के रूप में रखते हुए गत वर्ष 02 अक्तूबर को 'स्वच्छ भारत अभियान' शुरू किया गया, ताकि वर्ष 2019 में गांधीजी के जन्म की 150वीं वर्षगांठ तक गांधीजी के 'स्वच्छ भारत' के सपने को साकार किया जा सके। महात्मा गांधी ने हमेशा स्वच्छता पर बहुत जोर दिया। उनका कहना था कि 'स्वच्छता स्वतंत्रता से ज्यादा जरुरी' है। 15 अगस्त, 2014 को लालकिले से प्रधानमंत्री ने देशवासियों से जुड़े अत्यंत महत्वपूर्ण विषय 'स्वच्छ भारत अभियान" का श्रीगणेश किया। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 'एक भारत श्रेष्ठ भारत', 'सबका साथ सबका विकास' का जो नारा दिया वह महिला सशक्तीकरण की दिशा में भी एक अहम कदम है। प्रधानमंत्री ने कहा भी कि स्वच्छ भारत अभियान महात्मा गांधी के अधूरे सपने को पूरा करना है, गांधीजी चाहते थे कि भारत स्वच्छ बने। इसी स्वच्छ भारत अभियान के साथ प्रधानमंत्री ने देश भर मे शौचालय बनाने की पहल की थी। उनका भी मानना है कि भारत के गांवों में 60 प्रतिशत से भी अधिक लोग आज खुले स्थान पर शौचालय के लिए जा रहे हैं जिससे कई बीमारियों का सामना करना पड़ता है। मां–बहनों को

बाहर जाना पड़ता है। प्रधानमंत्री ने कोरपोरेट सामाजिक दायित्व के दायरे में आने वाली कंपनियों से भी इस कार्य को आगे बढ़ाने में प्राथमिकता देने का आह्वान किया।

निश्चय ही खुले मे शौच ,यह देश की एक बड़ी समस्या है। 2011 की जनगणना के मुताबिक देश भर में 53 प्रतिशत घरों में आज भी शौचालय नहीं हैं। ग्रामीण इलाकों के 69.3 प्रतिशत घरों में शौचालय नहीं हैं। सिर्फ गांवों की ही बात करें तो ज्यादातर राज्यों में स्थिति और भी चिंताजनक है। यह भी सच है कि बच्चियों और महिलाओं के खुले में शौच के लिए जाने के दौरान वह यौन हिंसा की शिकार हो जाती हैं, शौचालय न होने का बड़ा सामाजिक असर महिलाओं की सुरक्षा पर भी पड़ रहा है। और वैसे भी किशोरावस्था में स्वच्छता एवं सफाई का व्यक्तित्व पर व्यापक असर पड़ता है। किशोरियों में बच्चों के व्यक्तित्व विकास एवं उनके जीवन में हो रहे बदलावों के बीच स्वस्थ जीवन के लिए स्वच्छता एवं सफाई का व्यापक महत्व है। यदि किसी समूह में या खासतौर से किसी कक्षा में किशोर–किशोरियों या बच्चों से इस बात की चर्चा की जाए कि किनके घरों में शौचालय हैं एवं किनके परिवार के लोग शौच के लिए बाहर जाते हैं, तो बच्चों या किशोर–किशोरियों के व्यक्तित्व में साफ अंतर दिखाई पड़ेगा।

भारत में न केवल ग्रामीण बल्कि शहरी क्षेत्र में शौचालयों का अभाव है। दिल्ली जैसे शहर में दस वर्ष पूर्व बाजारों या सड़कों पर सार्वजनिक शौचालयों का अभाव था जो निश्चय ही स्त्रियों के कामकाज पर असर डालता था लेकिन आज इस शहर में शहर के बीचोंबीच अनेक सार्वजनिक शौचालय हैं जहां घरों से शहर खरीददारी या अन्य वजहों से आने वाली महिलाओं के लिये बड़ी राहत 'निर्मल भारत' से पहले 'संपूर्ण स्वच्छता अभियान' के माध्यम से है। निर्मल ग्राम की परिकल्पना की गई, जिसमें गांव में स्वच्छ पानी की उपलब्धता, कचरे का प्रबंधन एवं स्वच्छता सुविधाओं की उपलब्धता पर जोर दिया गया। सभी घरों में शौचालय बन जाने एवं अन्य व्यवस्थाएं हो जाने पर उस पंचायत को 'निर्मल पंचायत' घोषित किया जाने लगा। इस तरह की तमाम योजनाएं अगर पूरी तरह से सफल नहीं भी हो लेकिन इसे शुरुआत तो माना ही जा सकता है। 'मर्यादा अभियान' नाम देकर मध्य प्रदेश सरकार ने 'स्वच्छता अभियान' को महिलाओं की इज्जत के साथ जोड़कर प्रचारित किया, जिसका असर लोगों पर पड़ा है एवं लोग इस बात से सहमत दिख रहे हैं कि महिलाओं का खुले में शौच जाना उनकी मर्यादा के खिलाफ है। लेकिन निश्चय ही मर्यादा अभियान की सफलता इस बात पर निर्भर है कि गांवों में पानी की उपलब्धता किस हद तक है। यह भी एक दुखद तथ्य है कि पूरी दुनिया में सर्वाधिक लोग भारत यानी अपने देश में ही शौचालय न होने के कारण खुले में शौच करते हैं। कुछ लोगों का यह भी तर्क है कि कुछ मुट्ठी भर लोग आदतन ही खुले में शौच के लिये जाना चाहते हैं, लेकिन निश्चय ही यह तर्क सही नहीं है। एक सामाजिक कार्यकर्ता के अनुसार, आदत की वजह से खुले मे शौच जाने का तर्क गले ही नहीं उतरता है। यह सभी जगह एक मजबूरी है। अच्छा है अब यह समस्या मुख्य एजेंडा बन गई है। खुले में शौच की शर्मनाक समस्या से वर्ष 2019 के आखिर तक निजात पाने संबंधी प्रधानमंत्री के लक्ष्य को सफलतापूर्वक पाने के लिए सभी से इसमें योगदान अथवा श्रमदान करने का आह्वान किया गया है। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने कॉरपोरेट सेक्टर से भी अपील की है कि वे स्कूलों में बच्चियों, लड़कियों के वास्ते शौचालय बनवाने के लिए आगे आएं। कॉरपोरेट क्षेत्र के अनेक बड़े संस्थान और 'सुलभ' जैसे अनेक स्वैच्छिक संगठन शौचालय बनाने को आंदोलन का रूप दे ही चुके हैं। देश के अनेक भागों के स्कूलों व गांवों में वे कॉरपोरेट जगत् के साथ मिलकर शौचालय बना रहे हैं। सुलभ स्वैछिक संगठन के संस्थापक बिंदेश्वर पाठक का विश्वास है कि कॉरपोरेट क्षेत्र के साथ मिलकर वे भारत को हर घर में शौचालय का ध्येय पूरा कर पाएंगे। गौरतलब है कि इसी प्रयास के तहत प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के 'स्वच्छ भारत अभियान' में लोगों की अधिक से अधिक सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित' करने के लिये 'स्वच्छ भारत कोष' का गठन किया है और अब तो स्वच्छ भारत शुल्क भी लागू कर दिया गया है। एक स्वच्छ भारत के लिए यह शुल्क अदा करना कोई घाटे का सौदा नहीं है। स्वच्छ भारत मिशन में दान देकर देश–विदेश में बैठे लोग आयकर से छूट प्राप्त कर सकते हैं। इस दान की धनराशि का उपयोग नये शौचालयों के निर्माण के साथ

पुराने शौचालयों की मरम्मत और ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में बंद पड़े शौचालयों को चालू करने में किया जाएगा। सरकारी, प्राइमरी व माध्यमिक स्कूलों के साथ आंगनबाड़ी में भी शौचालय बनाने पर जोर दिया जाएगा। लड़कियों के स्कूल में शौचालय बनाने को अहम प्राथमिकता दी जाएगी। शौचालयों में पानी की आपूर्ति की लाइनों की मरम्मत और स्वच्छताकर्मियों को प्रशिक्षण देने में यह धनराशि खर्च की जाएगी। शौचालय न होने का बड़ा सामाजिक असर महिलाओं की सुरक्षा और साक्षरता पर भी पड़ रहा है।

हालांकि, 'खुले में शौच' आसानी से टाली जा सकने वाली डायरिया जैसी बीमारी का एक अहम कारण है और सिर्फ इसके कारण 5 साल से कम उम्र के तकरीबन 563 बच्चे हर दिन काल के गाल में समा जाते हैं। खुले में शौच के चलते ढेर सारी बीमारियां हमारे देशवासियों को अपनी गिरफ्त में लेती जा रही हैं। खुशी की बात यह है कि अब जाकर इतनी बड़ी इस समस्या को सर्वोच्च प्राथमिकता माना गया है। खुले में शौच करने वाले विकासशील देशों को देखें तो इसके सबसे ज्यादा त्रस्त होने वालों में भारतीय हैं। बांग्लादेश और नेपाल में भी हालात भारत से बेहतर हैं। आंकड़े निराशाजनक जरूर हैं पर एक उम्मीद–सी जगी है कि अब खुले में शौच करने की समस्या शीघ्र ही समाप्त होगी। सभी के लिए शौचालय सुविधा सुनिश्चित करने के लिए हमें राजनीतिक दृढ़ इच्छाशक्ति अब नजर आने लगी है। लगता है शौचालय जैसी सुविधा का बुनियादी हक सभी को मिलेगा और 'स्वच्छ भारत' एक हकीकत होगा।

केन्द्र के स्वच्छ भारत अभियान के साथ राज्यों में 'निर्मल भारत'के साथ 'मर्यादा अभियान' एवं अन्य योजनाएं चलाई जा रही हैं। मर्यादा अभियान नाम देकर मध्य प्रदेश सरकार ने स्वच्छता अभियान को महिलाओं की इज्जत के साथ जोड़कर प्रचारित किया, जिसका असर लोगों पर पड़ा है एवं लोग इस बात से सहमत दिख रहे हैं कि महिलाओं का खुले में शौच जाना उनकी मर्यादा के खिलाफ है। लेकिन निश्चय ही मर्यादा अभियान की सफलता इस बात पर निर्भर है कि गाँवों में पानी की उपलब्धता किस हद तक है। एक ओर बॉलीवुड की विद्या बालन जैसी मशहूर अभिनेत्रियां तो दूसरी ओर शौचालय के अभाव में ससुराल से पहले दिन वापस मायके लौट आने वाली मध्य प्रदेश के बैतूल जिले की अनिता ब्रांड अम्बेसेडर के रूप में समाज को इस बात के लिए प्रेरित कर रही हैं कि वे शौचालय बनवाएं एवं मर्यादापूर्ण,स्वस्थ तरीके से जिएं।

भले ही अनेक आलोचकों का मत है कि अगर ज़मीनी–स्तर पर सफाई अभियान की बात करें तो आज भी देश के कई कोनों में हमें गंदगी के ढेर नजर आ जाएंगे। नाममात्र की ही सफाई देखने को मिलती है लेकिन सकारात्मक बात यह है कि इससे स्वच्छता के प्रति जागरुकता बढ़ी है, और इसे सही दिशा में एक बढ़ता कदम माना जा रहा है। खासतौर पर यह महिला अधिकार सम्पन्नता की दिशा में एक महत्वपूर्ण स्तंभ बन गया है, और वह दिन दूर नहीं जब घूंघट काढ़े किसी नवविवाहिता को खुले में शौच जाने के लिये मजबूर नहीं होना पड़ेगा, घर की कोई बेटी–बहू पीले पड़ते जा रहे चेहरे से शौच जाने के लिये शाम का इंतजार नहीं करेगी और किसी किशोरी का स्कूल वहां शौचालय नहीं होने की वजह से छुड़वा नहीं दिया जाएगा।

(लेखिका विज़न न्यूज ऑफ इंडिया ऑनलाईन समाचार पोर्टल में कार्यकारी संपादक हैं।)
ई–मेल : anupamajiya@gmail.com

सदस्यता कूपन

मैं/हम**कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।
शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का
(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)
डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।
कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर अपर महानिदेशक, प्रकाशन विभाग के नाम नई दिल्ली में देय हो।
नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....
पता .....
..... पिन .....
इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड,
नई दिल्ली – 110003

बालिका सशक्तीकरण : भ्रम और सत्य

बिटिया दीप बने तो कैसे ?

—अरुण तिवारी

कहीं महिला आरक्षण, घर से बाहर की दुनिया में महिलाओं का बढ़ता वर्चस्व, बढ़ती पूछ, कैरियर में उनकी बढ़ती पकड़ की प्रतिक्रिया तो बेटी हिंसा बनकर सामने नहीं आ रही ? यौन हिंसा के अन्य कारणों में कहीं हमारे प्रतिकूल होता हमारा खानपान, बंद रहन-सहन, भागम-भाग भरी जीवनशैली, हताशा और बढ़ता तनाव तो नहीं ? क्या कारण है कि स्वयं किसी की बेटी होते हुए भी दादी मरने से पहले पोते का मुंह देखने की ख्वाहिश रखती है, पोती का नहीं ? बालिका सशक्तीकरण के अनेक पहलुओं में से कुछ पहलुओं पर ये कुछ बेहद ज़मीनी, किंतु जटिल प्रश्न हैं? संभव है कि इनके उत्तर की तलाश में हम बालिका सशक्तीकरण का असली मार्ग तलाश पाएं।

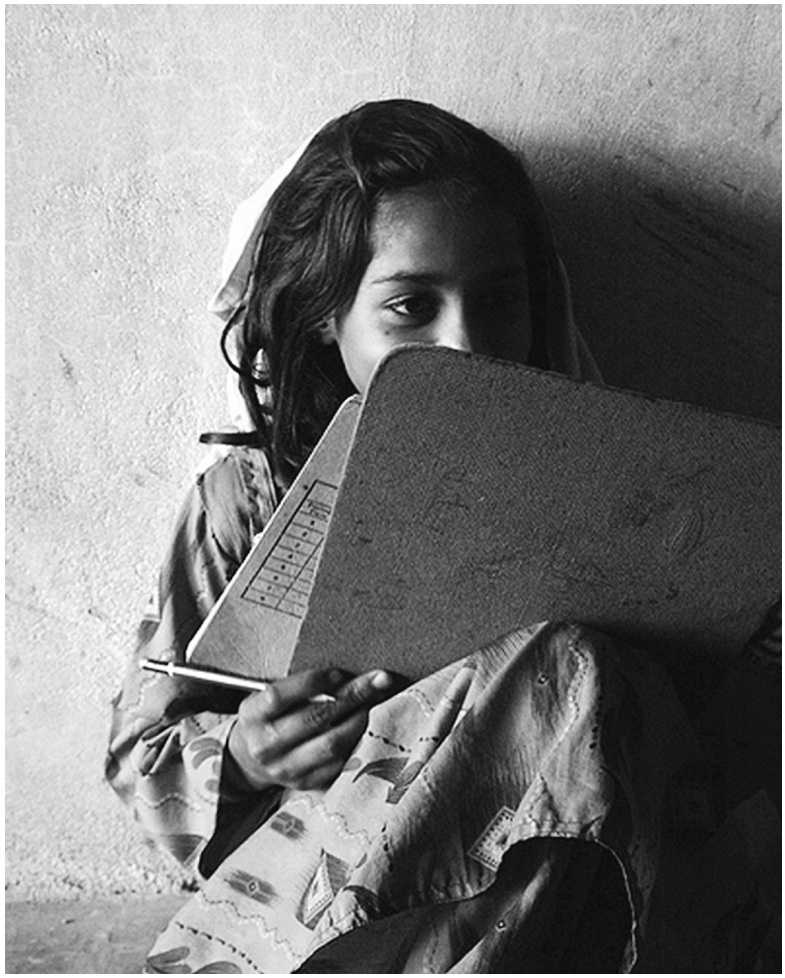

कथाकार उर्मिला शिरीष की एक कहानी है – 'जंगल की राजकुमारियां'। कहानी में नन्ही बुलबुल और दादी के बीच इन संवादों को जरा गौर से पढ़िए :

''अच्छा दादी, बताओ, क्या मैं पुलिसवाली नहीं बन सकती?''

''क्या करेगी पुलिसवाली बनकर ?''

''गुण्डों की पिटाई करुंगी। जो लोग लड़कियों को परेशान करते हैं; उनके पर्स और चेन लूटते हैं, उनको पकड़कर मारुंगी।''

बुलबुल कल्पना मात्र से प्रफुल्लित हो उठी। उसका रोम–रोम रोमांचित हो रहा था। कहती है –''पता है दादी, मम्मी मेरे लिए लड़का देख रही है। पापा ने कहा कि बचपन में शादी की, तो पुलिस वाले पकड़कर ले जाएंगे। दादी, मुझे तो पुलिस बनना है, पेंट–शर्ट पहनना हैं। कितनी स्मार्ट लगती है पुलिस वाली!''

संवाद से स्पष्ट है कि नन्ही बुलबुल के मन में गुण्डों की हरकतों और बाल विवाह के गैरकानूनी कृत्य के खिलाफ प्रतिक्रिया का बीज जड़ पकड़ चुका है। यह प्रतिक्रिया ही पुलिसवाली बनने की उसकी ख्वाहिश का मूल आधार है। यदि इस क्रिया और प्रतिक्रिया को आधार बनाकर, बालिका सशक्तीकरण की योजना बनाई जाए, तो वह कितनी सशक्त होगी? आइए, इसे समझने के लिए निम्नलिखित दो चित्रों को ध्यान से देखें :

अतीत के आइने से

उच्च तकनीकी शिक्षा, नौकरी, व्यापार करना, चुनाव लड़ना, अकेले घूमना, ड्राइविंग करना, फौज, पर्वतारोहण जैसे क्षेत्र बेटों के लिए ही हैं। बेटियों का इनमें क्या काम ? बेटियों के लिए चूल्हा–चौका है, शादी–ससुराल है, बच्चे–पति हैं, पूजा–पाठ है। सुदूर गांवों में अभी भी आम धारणा यही है। यह सत्य है कि इन धारणाओं का आधार, कुछ रुढ़ियां, कुछ जरूरतें और इतिहास का कोई कालखण्ड है। किंतु ऐतिहासिक भारतीय संस्कृति को इसके लिए जिम्मेदार नहीं ठहरा सकते। धर्मग्रंथ इसके गवाह हैं। बेटा–बेटी के प्रति समभाव की भारतीय दृष्टि युगों पुरानी है। मनु का युग, 22 हजार ईसा पूर्व का युग था। मनुस्मृति (अध्याय 9–130) की स्पष्ट राय थी कि बेटी, हर मामले में बेटे के बराबर है। उसे कमतर नहीं आंक सकते। मनुस्मृति (अध्याय 3–1–4), पैतृक संपत्ति में बेटे और बेटी के समान अधिकार का निर्देश देती थी। मनुस्मृति (अध्याय 3/55–62) में स्पष्ट लिखा है कि जिन्हें कल्याण की इच्छा हो, वे स्त्रियों को क्लेश न देवें।

वैदिककाल, ईसा से 10 हजार वर्ष पुराना था। वेद के ब्रह्मजाया सूक्त, कौमार्यावस्था के आरंभ से बेटियों की सामाजिक सुरक्षा को राष्ट्रीय दायित्व माने जाने का उल्लेख करते हैं। कन्या भ्रूण हत्या को स्त्रियों के नाश का कारण मानता है। उस काल में भी बेटियों को शिक्षा ही नहीं, स्वयं वर चुनने की स्वतंत्रता थी। प्रजापत्य विवाह को छोड़कर, अन्य सभी प्रकार की विवाह पद्धतियों में वर के चयन में कन्या की भूमिका रहती थी। उचित समय पर ही कन्या विवाह का चलन था। बेटियों को स्वतंत्रता थी कि वे चाहें, तो बिना विवाह किए सारा जीवन शिक्षा–शिक्षण में व्यतीत कर सकती थी। कन्या लूटी जाने वाली वस्तु में शामिल नहीं थी। चार्ल्स ई. ए. हेमिल्टन ने स्त्रियों की बाबत् पैगम्बर मुहम्मद के संदेशों का सार रखते हुए लिखा है–इस्लाम की शिक्षा यह है कि मानव अपने स्वभाव की दृष्टि से बेगुनाह है। वह सिखाती है कि स्त्री और पुरुष एक ही जौहर यानी तत्व से पैदा हुए। दोनो में एक ही आत्मा है। दोनो में इसकी समान रूप से क्षमता पाई जाती है कि वे मानसिक, अध्यात्मिक और नैतिक दृष्टि से उन्नति कर सकें। 'इस्लामिक मैरिड वूमैन एक्ट' तो बाद में पास हुआ, पैगम्बर इस्लाम ने उससे 12 सदी पहले घोषणा की थी कि औरत–मर्द युग्म में औरत, मर्द का दूसरा हिस्सा है। औरतों के अधिकार का आदर होना चाहिए।

इतिहास गवाह है कि बालिका स्वतंत्रता और सशक्तीकरण का चलन, लंबे कालखण्ड तक भारत में जारी रहा। सच यह है कि भारत में जैन और बौद्ध धर्म के पतन के साथ–साथ बेटियों की दुनिया और शक्ति को संकुचित करने के प्रयास जाने–अनजाने बढ़ते चले गये। यौवन आक्रमण के कारण भी बेटियों की स्वतंत्रता क्षीण हुई। ऐसा चलन चल पड़ा कि विधुर चाहे तो 10 वर्ष की कन्या से विवाह कर सकता था। कम उम्र में शादी का चलन उसी दौर की देन है। आठ से 10 वर्ष उम्र की कन्या का पति मर जाए, तो उसे ताउम्र विवाह से वंचित रहना पड़ता था। निर्णयों के मामले में बेटियों की दुनिया पराधीन–सी हो गई थी।

कहना न होगा कि जिस दौर में बालिका सशक्तीकरण की दृष्टि से कुछ बुरे चलन शुरू हुए, तो बालिका सुरक्षा के कई अच्छे सामाजिक और पारिवारिक चलन भी उसी दौर में आए। यह परिस्थितिजन्य बदलाव था। खैर, आज फिर वक्त है। आज हमें फिर सोचना चाहिए कि कहीं कम उम्र में बालिका विवाह न रुकने का वर्तमान चित्र पुनः परिस्थितिजन्य तो नहीं ? यह मां–बाप की चाहत है अथवा बाध्यता? कहीं लड़कियों के कम उम्र में व्यस्क होने के कारण तो ऐसा नहीं हो रहा ? कहीं ऐसा तो नहीं कि लड़कियों के साथ यौन अपराधों का भय मां–बाप को बेटियों की कम उम्र में शादी को प्रोत्साहित कर रहा है? कानूनन तय उम्र के वर, अब पर्याप्त पढ़ी–लिखी कन्या से ही विवाह करना पसंद करते हैं। कम उम्र में शादी करने पर यह मांग नहीं रहती। कहीं संतानों को पढ़ा–लिखा न पाने की अक्षमता तो बेटियों की कम उम्र में शादी की मजबूरी की वजह तो नहीं ?

भ्रूण हत्या : बेटे के सानिध्य, संपर्क और संबल से वंचित होते बूढ़े मां–बाप के अश्रुपूर्ण अनुभव और भारतीय आंकड़े, मातृत्व और पितृत्व के लिए खुद में एक नई चुनौती बनकर उभर रहे हैं। सभी देख रहे हैं कि बेटियां दूर हों, तो भी मां–बाप के कष्ट की खबर मिलते ही दौड़ी चली आती हैं, बिना कोई नफे–नुकसान का गणित लगाये; बावजूद इसके भारत ही नहीं, दुनिया में बेटियां घट रही हैं। कानूनी प्रतिबंध के बावजूद वे कन्या भ्रूण हत्या रूक नहीं रही नतीजन दुनिया के नक्शे में बेटियों की संख्या का घटना शुरू हो गया है। दुनिया में 15 वर्ष उम्र तक के 102 बेटों पर 100 बेटियां हैं। कानून के बावजूद, भारत में भ्रूण हत्या का क्रूर कर्म ज्यादा तेजी पर है। यहां छह वर्ष की उम्र तक का लिंगानुपात, वर्ष 2001 में जहां 1000 बेटों पर 927 बेटियां था, वह वर्ष 2011 में घटकर 919 हो गया है। यह राज्यस्तर पर, हरियाणा में न्यूनतम है। लिंगानुपात में गिरावट का यह क्रम वर्ष 1961 से 2011 तक लगातार जारी है।

बाल विवाह : कभी मां–बाप वीर बेटी मेडलीन, जेन, लक्ष्मीबाई, पद्मा और विद्युल्लता की वीरता के किस्से सुनाकर बालिका सशक्तीकरण का संस्कार डालते थे। आज उन्ही मां–बाप द्वारा बेटियां इस कदर बोझ मान ली गई हैं कि विश्व स्तर पर प्रत्येक तीन सेकेण्ड में एक बालिका का उसकी सहमति के बगैर विवाह किया जा रहा है। यूनीसेफ की रिपोर्ट (स्टेट्स ऑफ वर्ल्ड चिल्ड्रन रिपोर्ट–2012) का दावा है कि बाल विवाह के वैश्विक आंकड़ों में 40 फीसदी हिस्सेदारी भारत की है। प्रत्येक सौ में से सात कन्याओं की शादी 18 वर्ष से कम उम्र में हो रही है। वर्ष 2005–06 में किए

गए राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के मुताबिक, कुल उत्तरदाता महिलाओं में से 22 फीसदी महिलाओं ने अपनी पहली संतान को 18 से कम वर्ष की उम्र में जन्म दे दिया था। केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय की परिवार कल्याण सांख्यिकी रिपोर्ट–2011 से स्पष्ट है कि शहर व गांव के बीच कम उम्र कन्या विवाह अनुपात 1:3 है। कानून के बावजूद, कई समुदायों में आज भी बाल विवाह को मंजूरी है।

कम उम्र में बिटिया की शादी के जुल्म से हम चिंतित हों कि दुनिया भर में 15 से 19 उम्र में हुई कन्या मृत्यु में ज्यादातर मामले गर्भावस्था संबंधी जटिलता के पाए गए हैं। शादी होते ही पढ़ाई छोड़ने की मज़बूरी के आंकड़े, कम उम्र में विवाह के दुष्प्रभाव की तरह हमारे सामने हैं ही।

लिंगभेद : लिंगभेद की मानसिकता यह है कि 14 वर्षीय मलाला युसुफजई को महज् इसलिए गोली मार दी गई, क्योंकि वह स्कूल जा रही थी और दूसरी लड़कियों को भी स्कूल जाने के लिए तैयार करने की कोशिश कर रही थी। दुनिया के कई देशों में ड्राइविंग लाइसेंस देने जैसे साधारण क्षमता कार्यों के मामले में भी लिंगभेद है। लिंगभेद का एक उदाहरण, पोषण संबंधी एक सर्वेक्षण का निष्कर्ष भी है; तदानुसार, भारत में बालकों की तुलना में, बालिकाओं को भोजन में दूध–फल जैसी पौष्टिक खाद्य सामग्री कम दी जाती है। औसत परिवारों की आदत यह है कि बेटों की जरूरत की पूर्ति के बाद ही बेटियों का नंबर माना जाता है।

यौन हिंसा : किसी के भाई, पिता, पुत्र, पति, रिश्तेदार व मित्र की भूमिका निभाने वाले पुरुषों की यौन पिपासा का विकृत चित्र यह है कि अमेरिका में 12 से 16 वर्षीय लड़कियों में करीब 83 प्रतिशत यौन शोषण का शिकार पाई गईं हैं। भारत में भी यौन शोषण के आंकड़े बढ़ रहे हैं। दिल्ली में गत् तीन वर्षों के दौरान हुए कुल बलात्कार में 46 प्रतिशत पीड़िता अव्यस्क थीं। एनसीआरबी रिपोर्ट के मुताबिक, बलात्कार, छेड़खानी और जलाने के सबसे ज्यादा मामले पश्चिम बंगाल और मध्य प्रदेश में सामने आए हैं।

शिक्षा : भारतीय संविधान की धारा 14, 15, 15(3), 16 और 21(ए) विशेष रूप से शैक्षिक अधिकार में समानता सुनिश्चित करने हेतु बनाई गई थी। धारा 15 धर्म, वर्ण, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध करती है। इस बाबत् बढ़ी जागृति, शिक्षा का अधिकार कानून और अन्य प्रोत्साहन कारणों से शहर और गांव दोनों जगह बालक–बालिका साक्षरता प्रतिशत के बीच का अंतर घटा है। वर्ष 2011 में यह 16.68 प्रतिशत था। खुशी की बात यह है कि 2001 की तुलना में 2011 में शहरी स्त्री साक्षरता वृद्धि दर भले ही नौ रही हो, ग्रामीण क्षेत्र में यह वृद्धि 26 फीसदी दर्ज की गई; जबकि गांवों और शहरों में बालक साक्षरता वृद्धि दर क्रमशः पांच और 10 प्रतिशत पर अटक कर रह गई। इस चित्र के आगे बढ़ते हुए आप इस परिदृश्य पर भी खुश हो सकते हैं कि बोर्ड परीक्षाओं में अव्वल आने की दौड़ में लड़कियां, लड़कों को पछाड़ रही हैं। खुशी की बात है कि गांव की बेटियां भी अब गांव से दूर पढ़ने जाने में नहीं झिझकती। मध्य प्रदेश की बोर्ड परीक्षा में 500 में से 481 अंक पाकर नेत्रहीन सृष्टि ने सभी को चौंका दिया, तो नेत्रहीन सुनंदा ने नागदा में अव्वल आकर; सम्मान में उसे एक दिन के लिए नगरपालिका अध्यक्ष की कुर्सी सौंपी गई।

बागडोर : आप कह सकते हैं बेटियों के लिए नामुमकिन माने जाने वाले लगभग हर क्षेत्र में बेटियों ने प्रवेश किया है। नौकरी के मामले में लड़कियां, अपराजिता बनकर लड़कों को चुनौती दे रही हैं। भारत की सार्वजनिक और बहुराष्ट्रीय क्षेत्र की 11 प्रतिशत कंपनियों के मुख्य कार्यकारी पद पर आसीन शख्सियतें लड़कियां ही हैं। नर्सिंग में बेटियों का लगभग एकाधिकार है। अमेरिका में तो एक पुरुष नर्स पर 9.5 महिला नर्स का अनुपात है। 'थिंकटैंक सेंटर टैलेंट इनोवेशन' के सर्वेक्षण का यह निष्कर्ष भी खुश करने वाला है कि भारतीय लड़कियां अपनी पेशेवर आकांक्षाओं को पूरा करने के मामले में अमेरिका, जर्मनी और जापान में अपनी समकक्ष लड़कियों से आगे हैं। मैरी कॉम, किरन बेदी, संतोष यादव, महज् 19 साल की उम्र में बालाजी टेलीफिल्मस को ऊंचाइयों पर पहुंचाने वाली एकता कपूर से लेकर झारखण्ड की धरतीपुत्री दयामणी बारला की उपलब्धियां भी हमें खुश कर सकती हैं। किंतु क्या बालिका सशक्तीकरण के मोर्चे पर संतुष्ट होने के लिए इतना काफी है?

भ्रम और सत्य

उक्त दो चित्रों का तुलनात्मक निष्कर्ष बालिका सशक्तीकरण की हमारी आकांक्षा को संतुष्ट करने में निश्चित रूप से समर्थ नहीं है। प्रश्न यह है कि हम क्या करें ? भारत में साक्षरों की संख्या बढ़ाएं, दहेज के दानव का कद घटाएं, अवसर बढ़ाने के लिए महिला आरक्षण बढ़ाएं, विभेद और बेटी हिंसा रोकने के लिए नए कानून बनाएं, सजा बढ़ाएं या कुछ और करें? यदि इन कदमों से बेटा–बेटी अनुपात का संतुलन सध सके, बेटी हिंसा घट सके, हमारी बेटियां सशक्त हो सकें, तो हम निश्चित तौर पर ये करें। किंतु आंकड़े कुछ और कह रहे हैं और हम कुछ और। यह हमारे स्वप्न का मार्ग हो सकता है, किंतु सत्य इससे भिन्न है। सत्य यह है कि साक्षरता और दहेज का लिंगानुपात से कोई लेना–देना नहीं है। आंकड़े देखिए :

साक्षरता और लिंगानुपात : बिहार, भारत का न्यनूतम साक्षर राज्य है। तर्क के आधार पर तो प्रति बेटा, बेटियों की न्यूनतम संख्या वाला राज्य बिहार को होना चाहिए, जबकि देश में न्यूनतम

लिंगानुपात वाला राज्य हरियाणा है। हरियाणा में बेटी–बेटा लिंगानुपात 1000 : 834 है और बिहार में 1000: 935। बिहार का यह लिंगानुपात, उससे अधिक साक्षर हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, लक्षद्वीप, महाराष्ट्र राजस्थान, गुजरात, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और दिल्ली से भी ज्यादा है। दिल्ली में बेटा–बेटी दोनो वर्गों की साक्षरता, राष्ट्रीय औसत से काफी अधिक है, किंतु लिंगानुपात राष्ट्रीय औसत (919) से काफी कम यानी 871 है।

2001 की तुलना में 2015 में देश के सभी राज्यों का साक्षरता प्रतिशत बढ़ा है, किंतु लिंगानुपात में बेटियों की संख्या वृद्धि दर सिर्फ केरल, मिजोरम, लक्षद्वीप, तमिलनाडु, कर्नाटक, गोवा, अरुणाचल प्रदेश, पंजाब, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल, चंडीगढ़, दिल्ली, अंडमान–निकोबार में ही बढ़ी है। लक्षद्वीप ने सबसे ऊंची छलांग मारी। गौर कीजिए कि ये वे राज्य भी नहीं हैं, 2001–2011 के दौरान जिन सभी की अन्य राज्यों की तुलना में साक्षरता अधिक तेजी से बढ़ी हो। एक और विरोधाभासी तथ्य यह है कि बिहार में ज्यों–ज्यों साक्षरता प्रतिशत बढ़ रहा है, त्यों–त्यों लिंगानुपात में बालिकाओं की संख्या घट रही है। वर्ष 2001 में दर्ज 942 की तुलना में 2011 में यह आंकड़ा 935 पाया गया। ये आंकड़े शासकीय हैं सत्य हैं; साबित करते हैं कि साक्षरता और लिंगानुपात, दो अलग–अलग घोड़े के सवार हैं।

दहेज और लिंगानुपात : बेटियों की भ्रूण हत्या का दूसरा मूल कारण दहेज बताया जाता है। यदि यह सत्य होता, तो भी बिहार में लिंगानुपात पंजाब–हरियाणा की तुलना में कम होना चाहिए था। आर्थिक आंकड़े कहते हैं कि पंजाब–हरियाणा की तुलना में, बिहार के अभिभावक दहेज का वजन झेलने में आर्थिक रूप से कम सक्षम हैं। अब प्रश्न है कि यदि भ्रूण हत्या का कारण अशिक्षा और दहेज नहीं, तो फिर क्या है ? बेटियों की सामाजिक सुरक्षा में आई कमी या नारी को प्रतिद्वन्दी समझ बैठने की नई पुरुष मानसिकता अथवा बेटियों के प्रति हमारे स्नेह में आई कमी? कारण की जड़, कहीं किसी धर्म, जाति अथवा रूढ़ि में तो नहीं ? कहीं ऐसा तो नहीं कि औपचारिक साक्षरता में आगे निकल जाने की होड़ में हम संवेदना, संबंध और संस्कार की दौड़ में इतना पिछड़ गये हैं कि मां–बाप ही नहीं, बेटियों को भी इस धरा पर बोझ मानने लगे हैं ? सोचें!

खैर, अभियानों से भी बात बन नहीं रही। बेटियों की सुरक्षा और सशक्तीकरण के लिए गुजरात में बेटी बचाओ, कन्या केलवणी, मिशन मंगलम्, नारी अदालत, चिरंजीव योजना जैसे यत्न हुए। स्वयं सुरक्षा के लिए गुजरात में 'पडकार' कार्यक्रम चले। अब तो देश के सभी राज्यों में ऐसे प्रयत्नों की शुरुआत हो चुकी है। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने भी 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' संकल्प को प्राथमिकता के तौर पर नीति तंत्र, क्रियान्वयन

तंत्र और देशवासियों के सामने रख दिया है। तमन्ना है कि नतीजा निकले, किंतु क्या यह इतना सहज है ?

भ्रूण हत्या गलत है, किंतु क्या लिंगानुपात में बालिकाओं की संख्या का एक सीमा तक घटना वाकई नुकसानदेह है? भारत के कई इलाकों में बेटी के लिए वर नहीं, बल्कि वर के लिए वधु ढूंढने की परम्परा है। ऐसी स्थिति में बेटी पक्ष पर दहेज का दबाव डालने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। बालिका सशक्तीकरण के लिए यह अच्छा है कि बुरा ? सोचिए! शायद लिंगानुपात की इसी उलट–फेर से दहेज के दानव के दांत तोड़ने में मदद मिले। आइये, अब अगले भ्रम से रुबरु हों।

शिक्षा और यौन हिंसा : मेरा मानना है कि संवेदना, संबंध, समभावी और सहभागी संस्कार के बगैर, साक्षरता उस अग्नि के समान है, जो स्वयं की लपट के लिए, दूसरे को भस्म करने में संकोच नहीं करती और दूसरे के भस्म होने के साथ एक दिन स्वयं भी भस्म हो जाती है। संभवतः यही कारण है कि कोरी शिक्षा बालिका सशक्तीकरण के लिए प्रेरित करने में सक्षम नहीं है। यदि वर्तमान शिक्षा सचमुच सक्षम होती, तो यौन हिंसा की शिकार महिलाओं में 35 प्रतिशत के अनुभव, अपने ही सगे–संबंधी अथवा साथियों द्वारा यौन अथवा शारीरिक हिंसा के न होते। अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, इजराईल और दक्षिण अफ्रीका में हुई महिला हत्याओं में 40 से 70 प्रतिशत हत्याएं अंतरंग संबंध रखने वाले साथियों द्वारा किए जाने का आंकड़ा है। गौर कीजिए कि यह आंकड़ा किसी एक कम पढ़े–लिखे देश का नहीं है।

भारत में साक्षरता निरंतर बढ़ रही है; बावजूद इसके महिला अपराध के आंकड़े निरंतर घट नहीं रहे। क्यों? दिल्ली, देश की राजधानी है। दिल्ली, पढ़े–लिखों का शहर है। यहां के 90.94 प्रतिशत मर्द पढ़े–लिखे हैं। दिल्ली में महिला साक्षरता का आंकडा

80.76 प्रतिशत है। दिल्ली में कानून का पहरा, अन्य राज्यों की तुलना में ज्यादा सख्त माना जाता है; फिर भी यहां हर दो दिन में पांच बालिकाओं का बलात्कार होता है; तो क्या कानून को और सख्त कर इस चित्र को बदला जा सकता है?

कानूनी मार्ग

गौर कीजिए कि अभिभावकों को बालिका शिक्षा के लिए तत्पर करने के पीछे की मूल शक्ति कोई कानून नहीं है। दोपहर के भोजन, छात्रवृत्ति, मुफ्त शिक्षा, भविष्य के उपलब्ध होते अवसर और अब विवाह योग्य कन्याओं के पढ़ी–लिखी होने की मांग ने तस्वीर बदल दी है। हमने बाल विवाह को प्रतिबंधित करने वाला कानून (वर्ष 1929) बनाया। कानून को प्रभावी बनाने के लिए क्रमशः वर्ष 1949, 1978 और 2006 में संशोधन भी किया। कह सकते हैं कि इसका थोड़ा असर तो है, किंतु भारत के कई हिस्सों और समुदायों में बाल विवाह अभी भी एक चलन की तरह बेझिझक जारी है। यौन शोषण में वृद्धि आंकडों के बाद, सरकार को यौन शोषण (निरोध, निषेध और सुधार) कानून 2013 बनाना पड़ा। क्या इससे यौन शोषण के आंकड़े वाकई घटे? क्या पुरुषों की यौन संबंधी मानसिक विकृति को हम तनिक भी सुधार सके? क्या कानून बनाकर मर्दों को संकल्पित कराना संभव है कि यह दुराचारी कृत्य करने योग्य नहीं हैं? उलटे इसका नकरात्मक असर यह हुआ है कि निजी कंपनियों ने महिला कामगारों को काम पर रखना कम कर दिया है। शहरों की आबादी में 26 फीसदी की बढ़ोतरी दर्ज की गई है। किंतु शहरी कामगार महिलाओं की स्थिति बदतर हुई है। एस. वर्मा समिति की रिपोर्ट के अनुसार, यौन शोषण तथा महिला हिंसा जैसे अपराधों से निपटने के दण्ड विधान को कठोर बनाने के बावजूद भारत में ऐसे अपराधों में कमी नहीं आई है।

स्पष्ट है कि बात न कानून से बनेगी, न सिर्फ अभियानों से और न महज औपचारिक पढ़ाई से। आरक्षण भी सशक्तीकरण का असल उपाय नहीं है। क्यों? क्योंकि पढ़ाई के प्रमाणपत्र, पद और प्रतिद्वंदिता की दौड़ में आगे निकल जाने के लिए ताकत देना मात्र ही बालिका सशक्तीकरण नहीं है। सच पूछें, तो बालिका सशक्तीकरण की असल परिभाषा और असल जरूरत कुछ और हैं।

असल सशक्तीकरण

सच यह है कि यदि बेटी को आरक्षण भले ही न मिले, बस, समान सुविधा और अवसर ही दिए जाएं, तो भी बेटियां, बेटों से निश्चित ही आगे निकल जाएंगी। इसके कारण हैं, किंतु यह तुलना व्यर्थ है। बेटा और बेटी... दोनों कुदरत की दो भिन्न नियामतें जरूर हैं, लेकिन न बेटी दोयम है और न बेटा प्रथम। दोनों के भिन्न गुण हैं और भिन्न भूमिका। कुदरत ने नारी को जिन गुणों का अनुपम संसार बनाया है, पुरुष उनकी पूर्ति नहीं कर सकता। गौर कीजिए कि बेटियां, प्रकृति की लूट में सीधी–सीधी भूमिका में कम ही हैं। अधिकतम उपभोग और अंतहीन आर्थिक लक्ष्य के अंधे कुएं की ओर जाने के लिए मची वैश्विक भगदड़ और विध्वंस के बीच, रचना और सदुपयोग के जिन बीजों को बोने, पालने और पोसने की जरूरत है, बेटियां उसमें उर्वर भूमिका अदा कर सकती हैं।

भारतीय जरूरत : घटती समरसता, घटती संवेदनशीलता, घटता साझा, घटते जीवन मूल्य, घटते कुदरती संसाधन, परिणामस्वरूप बढ़ता अवसाद, बढ़ती हिंसा, बढ़ता विभेद, बढ़ती असहिष्णुता, बढ़ती चुनौतियां, बढ़ता शोषण, बढ़ता कुपोषण और बिखरते परिवार,–सोचिए, इन नकारात्मक चित्रों के बीच यदि रचनात्मक भारत का सकारात्मक पुष्ट चित्र बनाना हो, तो क्या नारी को सक्रिय और सहभागी भूमिका में लाए बगैर यह संभव है? नहीं, क्योंकि रचना और पोषण, नारी के ही मौलिक गुण हैं, पुरुष के नहीं। समाज, संसद, आर्थिकी और प्रकृति में नारी की सक्रिय उपस्थिति से ही आर्थिक विषमता, सांप्रदायिक असहिष्णुता और प्राकृतिक शोषण के वर्तमान चित्र को उलटा जा सकता है। ''श्री वाक्च नरीणां, स्मृर्तिमेधा, धृति, क्षमा'' अर्थात श्री, वाणी, स्मृति, मेधा, धैर्य और क्षमा नारी को प्रकृति प्रदत्त शक्तियां हैं। यह गीता के विभूतियोग अध्याय में कहा गया है। कहना न होगा कि जन्म से इन्ही गुणों का विकास करना ही किसी भी बालिका का असल सशक्तीकरण है। मानसिक और नैतिक सबलता ही, असल सबलता है। इन्हीं गुणों के विकास से बेटी, एक सशक्त, समर्थ, सक्रिय और अपनी सर्वकालिक–सार्वभौमिक भूमिका के लिए सतत् सक्रिय, सशक्त और सक्षम बन पाएगी।

बेटी को बेटा बनाने की कवायद आप्राकृतिक है। इस आप्रकृतिक हठ से हटकर, प्रकृति मार्ग पर चलना है। बेटी को बेटी बनाना है; एक आत्मदीप, जो अपनी रोशनी से अपने परिवेश को रोशन करने में समर्थ हो। यह कैसे हो? यही सोचना है; यही मार्ग है। ऐसा आत्मदीप बनने वाली बेटी फिर चाहे फैक्टरी में हो, विद्यालय में, संसद में, खेल के मैदान में, खेत में, सीमा पर या घर के भीतर वह अपनी रचना, संवेदना, श्री आदि गुणों के बूते कृति और प्रकृति को पुष्ट ही करेगी। इससे समाज में स्त्री–पुरुष प्रतिद्वंदिता नहीं, बल्कि सहभाग बढ़ेगा। राष्ट्रपिता बापू के सपने का अहिंसक और सर्वोदयी समाज, बालिका सशक्तीकरण से ही संभव है। यही असल सशक्तीकरण होगा; बालिका का भी, भारत का भी और भविष्य का भी।

(लेखक पिछले करीब 30 वर्षों से पत्रकारिता के क्षेत्र में सक्रिय हैं। आकाशवाणी और दूरदर्शन में सामयिक कार्यक्रमों में हिस्सा लेते रहे हैं। कई प्रमुख समाचार–पत्रों से भी जुड़े रहे। इन्होंने 13 पुस्तकों का संपादन/लेखन किया है। वर्तमान में विभिन्न समाचार–पत्रों एवं सामाजिक पत्रिकाओं के लिए पानी–प्रकृति, ग्रामीण विकास एवं लोकतांत्रिक मसलों पर नियमित लेखन)

भारत में महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति

—पश्यंती शुक्ला

इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि सरकार के तमाम प्रयासों ने महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति को पहले से बहुत बेहतर स्थिति में पहुंचाया है लेकिन अब नए-नए कानून बनाने से अधिक यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि कैसे उपलब्ध कानूनों का सही क्रियान्वयन किया जाए ताकि अपने संवैधानिक अधिकारों का लाभ शहरों में रह रही उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं के साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों की वह महिलाएं भी उठा सकें जो संविधान द्वारा प्रदान किए गए मौलिक अधिकारों से भी वंचित हैं।

भारतीय समाज में महिलाएं अपमान, अत्याचार और शोषण का शिकार रही हैं इसीलिए भारत में महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति का मुद्दा हमेशा ही मुख्यधारा की चर्चा का हिस्सा रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व तक स्त्रियों की निम्न दशा के प्रमुख कारण अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता, धार्मिक निषेध, जाति बन्धन, स्त्री नेतृत्व का अभाव तथा पुरुषों का उनके प्रति अनुचित दृष्टिकोण आदि थे। हालांकि स्वतंत्रता के बाद से आई विभिन्न सरकारों ने देश में महिलाओं को सामाजिक व आर्थिक विकास में बराबर की हिस्सेदारी के अवसर प्रदान करने के लिए समय–समय पर अनेक कानून लाकर उनके सशक्तीकरण को सुनिश्चित करने का प्रयास किया है। इसके बावजूद मुख्यधारा में महिलाओं की हिस्सेदारी सुनिश्चित करने के मामले में भारत अभी भी दुनिया के कई देशों से पीछे हैं।

कुछ ही महीने पहले प्रकाश में आए एशिया–प्रशांत क्षेत्र में लैंगिक समानता पर किए गए एक सर्वे के अनुसार महिलाओं के सामाजिक–आर्थिक सशक्तीकरण के मामले में भारत इस क्षेत्र के 16 देशों में सबसे निचले पायदान पर है। रिपोर्ट में कहा गया कि एशिया–प्रशांत क्षेत्र में लैंगिक समानता का अभाव है और इस दिशा में काफी प्रगति की आवश्यकता है। रिपोर्ट में कहा गया कि यद्यपि इस क्षेत्र में पुरुषों के मुकाबले महिलाएं ज्यादा शिक्षित हो रही हैं, लेकिन लैंगिक समानता का अभी भी अभाव है, खासकर कारोबारी नेतृत्व, कारोबारी स्वामित्व और राजनीतिक भागीदारी के मामले में। पूरे क्षेत्र में न्यूजीलैंड 77 अंकों के साथ महिला सशक्तीकरण की स्थिति में सबसे बेहतर है। जबकि 76 अंकों के साथ ऑस्ट्रेलिया दूसरे, 72.6 अंक के साथ फिलीपींस तीसरे और 70.5 अंक के साथ सिंगापुर चौथे स्थान पर रहा। वहीं 44.2 अंक प्राप्त करके भारत, पड़ोसी देशों बांग्लादेश और श्रीलंका से भी पीछे रहा।

सरकारी आंकड़ों में भी महिलाओं की स्थिति कुछ खास बेहतर नहीं है। आर्थिक विकास और शिक्षा का स्तर बढ़ने के बावजूद महिलाओं के पास मन–मुताबिक निर्णय लेने की स्वतंत्रता बहुत कम है। महिलाओं की स्थिति के व्यापक अध्ययन के लिए बनाई गई एक उच्चस्तरीय समिति ने 2014 में अपनी प्रथम रिपोर्ट जारी कर महिलाओं के विरुद्ध हिंसा, घटते लिंग अनुपात और महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण के तीन मुख्य सामयिक मुद्दे बताए और कहा कि इन पर देश को तत्काल ध्यान देने और सरकार द्वारा तुरंत कदम उठाने की आवश्यकता है।

सामाजिक स्थिति

स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम थर्मामीटर वहां की महिलाओं की स्थिति

है। हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुंचा देना चाहिए, जहां वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सकें। हमें नारीशक्ति के उद्धारक नहीं, वरन् उनके सेवक और सहायक बनना चाहिए। भारतीय नारियां संसार की अन्य किन्हीं भी नारियों की भांति अपनी समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखती हैं। आवश्यकता है उन्हें उपयुक्त अवसर देने की। इसी आधार पर भारत के उज्ज्वल भविष्य की संभावनाएं सन्निहित हैं।

भारतीय संविधान में महिलाओं को समानता के अधिकार दिए तो गए हैं फिर भी अपवाद छोड़कर यदि समग्रता में देखा जाए तो वर्तमान में भी भारतीय समाज की पुरुष प्रधान सोच के कारण अधिकतर महिलाएं अपने कैरियर, विवाह या विवाह के बाद भी अपने या अपने बच्चों संबंधित निर्णय लेने को स्वतंत्र नहीं हैं। संविधान में तमाम अधिकार मिले होने के बाद भी समाज में महिलाओँ की सामाजिक स्थिति बेहद कमजोर है। बलात्कार, हत्या, दहेज, घरेलू हिंसा जैसे मामले आए दिन अखबारों की सुर्खियां बने रहते हैं। इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि 1947 से आई लगभग सभी सरकारों द्वारा महिलाओं के उत्थान के लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन किया गया है लेकिन इन योजनाओं का क्रियान्वयन निचले स्तर तक उचित ढंग से न हो सकने के कारण स्त्रियों को अपेक्षित लाभ नहीं मिला है। भारत सरकार ने महिलाओं के संवैधानिक अधिकारों की रक्षा करने के लिए विभिन्न कानूनों को समय–समय पर पारित किया जिनमें हिंदू विवाह अधिनियम (1995), हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम (1956), दहेज प्रतिषेध अधिनियम (1961), गर्भावस्था अधिनियम की मेडिकल टर्मिनेशन (1971), समान पारिश्रमिक अधिनियम (1976), बाल विवाह निरोधक अधिनियम (1976 आदि) प्रमुख हैं फिर भी शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सुरक्षा के मानकों पर भारतीय महिलाएं संघर्ष करती दिखाई देती हैं।

शिक्षा : भारत में साक्षरता दर में एक बड़ी असमानता है। 2011 के जनगणना आंकड़ों के अनुसार 82.14 % पुरुषों के मुकाबले महिलाओँ में साक्षरता का प्रतिशत 65.46 % था। हालांकि इस तथ्य को झुठलाया नहीं जा सकता कि भारत में महिला साक्षरता दर धीरे–धीरे बढ़ी है लेकिन यह भी सत्य है कि आज भी लड़कों की तुलना में बहुत ही कम लड़कियां स्कूलों में दाखिला लेती हैं और उनमें से कई बीच में ही अपनी पढ़ाई छोड़ देती हैं। लिहाजा उच्च शिक्षा के मामले में पुरुषों के मुकाबले महिलाओं की स्थिति कहीं अधिक खराब है।

स्वास्थ्य : भारत में महिलाओं की औसत आयु प्रत्याशा में पिछले कुछ वर्षों में सुधार आया हैं फिर भी आज भी यह दुनिया के कई देशों के मुकाबले कहीं पीछे है। वर्ल्ड बैंक की एक्सपर्ट मीरा चटर्जी की रिपोर्ट 'स्पायरिंग लाइव्स' में भारत समेत बांग्लादेश, नेपाल, पाकिस्तान तथा श्रीलंका में महिलाओं की स्वास्थ्य की स्थिति का लेखा–जोखा पेश किया गया है, और इसके अनुसार भारत में आज भी प्रति एक लाख प्रसवों के दौरान 301 महिलाओं की मृत्यु हो जाती है। जबकि नेपाल में यह दर 281, पाकिस्तान में 276 तथा श्रीलंका में सिर्फ 58 है। रिपोर्ट के अनुसार भारत में 15–18 साल की उम्र की 51.4 फीसदी महिलाएं खून की कमी से ग्रस्त हैं तथा इसी आयु वर्ग में 41 फीसदी पोषण के अभाव में कम वजन की समस्या से जूझ रही हैं। 20–22 आयु वर्ग में करीब 45.6 फीसदी महिलाएं रक्त अल्पतता से ग्रस्त हैं तथा 30.6 फीसदी अंडरवेट हैं। इतना ही नहीं प्रजनन स्वास्थ्य में कमजोर होने की एक मुख्य वजह 50 फीसदी महिलाओं का विवाह 20 साल से कम उम्र में होना है। रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत को महिलाओं के स्वास्थ्य पर फोकस करने के लिए अपने स्वास्थ्य सुरक्षा तंत्र को मजबूत बनाया जाए। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षित स्वास्थ्यकार्मिकों की तैनाती कर सभी प्रजनन सेवाएं एक स्थान पर दी जानी चाहिए।

सुरक्षा : महिलाओं के प्रति अपराध पर लगाम लगाने और उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए भारतीय संविधान में कानूनों की एक लंबी सूची है। फिर भी दहेज हत्या, घरेलू हिंसा, कन्या भ्रूणहत्या, बालविवाह, यौनशोषण, ऑनर किलिंग और ट्रैफिकिंग आदि के मामले भारत में आम बात है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के ताजा आंकड़ों के अनुसार पिछले एक दशक में महिलाओं के साथ अपराध के मामलों में दुगुने से ज्यादा की बढ़ोतरी हुई है। इस दौरान देश में ऐसे 22 लाख 40 हजार मामले दर्ज हुए हैं। आंकड़ों के अनुसार महिलाएं हर एक घंटे में 26 अपराध यानी कि हर दो मिनट पर एक अपराध का शिकार बनती हैं। इन अपराधों में पतियों से और संगे–संबधियों के हाथों मिलने वाली प्रताड़ना के मामले सबसे ज्यादा होते हैं। पिछले एक दशक में ऐसे 9 लाख 9 हजार 713 मामले दर्ज हुए हैं। इसके बाद दूसरा नबंर यौन प्रताड़ना से जुड़े मामलों का है। पिछले दस सालों में यौन प्रताड़ना के 4 लाख 70 हजार 556 मामले दर्ज हुए हैं। तीसरे स्थान पर अपहरण से जुड़े मामले हैं। समीक्षाधीन अवधि में ऐसे 3 लाख 15 हजार 74 मामले दर्ज हुए। इसके साथ ही बलात्कार के 2 लाख 43 हजार मामले, शारीरिक रूप से प्रताड़ित करने के 1 लाख 4 हजार 151 मामले और दहेज हत्या से जुड़े 80 हजार 833 मामले दर्ज किए गए। इसके अलावा दहेज विरोधी कानून के तहत 66 हजार मामले भी सामने आए।

आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2014 में महिलाओं के खिलाफ कुछ नयी श्रेणियों में भी आपराधिक मामले दर्ज हुए जिनमें बलात्कार के प्रयास से जुड़े 4 हजार 234 मामले, आत्महत्या के लिए

उकसाने से जुड़े 3734 मामले और घरेलू हिंसा से बचाव के 426 मामले शामिल हैं।

भारत में महिलाओं की प्रमुख समस्याएं

अशिक्षा व निरक्षरता; आर्थिक स्वावलंबन का अभाव; संवैधानिक तथा कानूनी प्रावधानों की जानकारी का अभाव; अधिकारों से अनभिज्ञता; घरेलू हिंसा; घर तथा कार्यस्थलों पर यौन शोषण; दहेज; बालविवाह; बालिका शिशु वध तथा भ्रूण हत्या; देह व्यापार; सार्वजनिक जीवन में सीमित सहभागिता; समाज में स्त्री–पुरुष के बीच दोहरे मानदंड; निर्णय लेने की अक्षमता।

आर्थिक स्थिति

सन् 2013 में 'अंतर्राष्ट्रीय परामर्श व प्रबंधन फर्म बूज एंड कंपनी' ने 'थर्ड बिलियन इंडेक्स' नामक रिपोर्ट जारी की। स्त्रियों के आर्थिक सशक्तीकरण को लेकर किए गए सर्वेक्षण सूची में भारत को 128 मुल्कों में 115 वां स्थान मिला है। रिपोर्ट में कहा गया कि भारतीय अर्थव्यवस्था ने अपने देश की महिलाओं के लिए असीम संभावनाएं पैदा की हैं, इसके बावजूद महिलाओँ का एक बड़ा हिस्सा सांस्कृतिक परंपराओं, लिंग–भेद व संसाधनों के अभाव में अपनी क्षमता का पूरा उपयोग नहीं कर पा रहा है।

देश के आर्थिक विकास में महिलाओं की साझेदारी की महत्ता पर बल देते हुए, वर्ष 2011 के इंदिरा गांधी शांति पुरस्कार प्रदान करते समय भारत के वर्तमान राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने कहा था कि राष्ट्र की आर्थिक गतिविधियों में महिलाओं की उचित भागीदारी के बिना सामाजिक प्रगति की अपेक्षा रखना बेमानी होगा। जहां–जहां महिलाओं की व्यापार व कॉरपोरेट जगत में अहम भागीदारी रही है संयुक्तराष्ट्र के एक सर्वेक्षण के मुताबिक वहां करीब 53% अधिक लाभांश और करीब 24% अधिक बिक्री पाई गई है। लेकिन चंद महिलाओं को ऊंचे पद तथा सुदृढ़ स्थिति में देखकर हम उन अशिक्षित और शोषित महिलाओं को नजरअंदाज नहीं कर सकते जो आज भी अपने मौलिक अधिकारों के लिए संघर्षरत हैं।

संयुक्त राष्ट्र के लैंगिक असमानता सूचकांक (जी आई आई) 2011 में दुनिया के 187 देशों में भारत 134वें पायदान पर है जो लैंगिक समानता में भारत की दयनीय स्थिति को उजागर करता है।

श्रमशक्ति में महिलाओं की भागीदारी– महिलाएं आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका तो निभाती हैं लेकिन उनके काम का सही मूल्यांकन नहीं किया जाता है। राष्ट्रीय आंकड़ा संग्रहण एजेंसियां भी इस तथ्य को स्वीकार करती हैं कि श्रमिकों के रूप में महिलाओं की भागीदारी को लेकर एक गंभीर न्यूनानुमान है।

संविधान में महिलाओं के लिए प्रावधान

अनुच्छेद 15	धर्म,जाति,जन्मस्थान अथवा लिंग के आधार पर भेदभाव न किया जाना।
अनुच्छेद 15(3)	महिलाओं के हित में विशेष उपबंधों का निर्माण किया जाना।
अनुच्छेद 16	लोकसेवा में समान रूप से अवसर दिया जाना।
अनुच्छेद 19	समान रूप से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता।
अनुच्छेद 21	प्राण एवं दैहिक स्वाधीनता से वंचित न किया जाना।
अनुच्छेद 23	क्रय–विक्रय एवं बलात् श्रम से संरक्षण।
अनुच्छेद 39	समान रूप से आजीविका के साधन उपलब्ध कराना।
अनुच्छेद 40	पंचायती राज संस्थाओं में 73वें एवं 74वे संशोधन द्वारा 33 प्रतिशत आरक्षण।
अनुच्छेद 42	काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता का उपबंध।
अनुच्छेद 47	महिलाओं हेतु पोषाहार, जीवन स्तर तथा लोकस्वास्थ्य में सुधार हेतु उपबंध करना।
अनुच्छेद 51	स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध प्रथाओं का त्याग करना।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन– एनएसएसओ की एक रिपोर्ट की माने तो भारत में शिक्षा के प्रसार के बावजूद शिक्षित युवाओं को उनकी योग्यता के अनुरूप रोजगार नहीं मिल पाता है और इन हालातों में काबिल होने के बावजूद घर बैठ जाने वालों में महिलाओं का प्रतिशत सबसे ज्यादा होता है। एनएसएसओ द्वारा आयोजित रोजगार तथा बेरोजगारी सर्वेक्षण 2011 से यह स्पष्ट होता है कि 15 से 59 वर्ष की आयु के बीच की शहरी महिलाओं में सबसे अधिक बेरोजगारी दर 15.7 फीसदी पाई गई है। जबकि इसी उम्र के पुरुषों की बेरोजगारी दर 9 फीसदी दर्ज की गई है। आँकड़े इस बात का साफ संकेत देते हैं कि श्रमजीवी रोजगार में प्रवेश के लिए अधिक से अधिक संख्या में शहरी महिलाएं तैयार हैं लेकिन मौजूदा समय में पर्याप्त और योग्यता अनुसार अवसर खोजने में असमर्थ हैं।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) द्वारा, वैश्विक रोजगार की प्रवृत्तियों पर 2012 में जारी की गई रिपोर्ट के अनुसार 131 देशों में भारत की शहरी महिला श्रमिक शक्ति दर (डब्ल्यूपीआर) 15 फीसदी के साथ दुनिया भर में नीचे से ग्यारहवें स्थान पर है जो एक बेहद चिंताजनक आंकड़ा है।

अन्य जनसांख्यिकीय समूहों की तुलना में शहरी महिलाओं में बेरोजगारी दर सबसे अधिक पाई गई है। 15.7 फीसदी बेरोजगारी दर के साथ स्नात्तक एवं उच्च डिग्रियां हासिल करने के बावजूद शहरी महिलाओं में बेरोजगारी का प्रतिशत सर्वाधिक है।

विश्व बैंक के अनुमान के अनुसार, साल 2011 में भारत में 15 वर्ष से अधिक आयु की महिलाओं का डब्ल्यूपीआर यानी 'महिला श्रमिक शक्ति दर' 30 फीसदी से कम दर्ज की गई, जबकि ब्राजील एवं चीन में इन्हीं उम्र की महिलाओं का डब्ल्यूपीआर 60 फीसदी एवं 67 फीसदी देखा गया है।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन की 2011 की रिपोर्ट के अनुसार लगभग 20 फीसदी शहरी महिलाएं घरेलू सहायिका, सफाई कर्मचारी, विक्रेता ,फेरी वाले एवं दुकानों में सेल्सगर्ल के रूप में काम करती हैं। वहीं 43 फीसदी महिलाएं स्वनियोजित कार्य करती हैं जबकि इतनी हीं महिलाएं मासिक वेतन पर काम करती हैं। लगभग 46 फीसदी मासिक वेतन पर काम करने वाली शहरी महिलाओं के लिए सामाजिक सुरक्षा एवं रोजगार लाभ तय नहीं हैं। जबकि 56 फीसदी महिलाओं के पास लिखित में किसी भी तरह का जॉब कांट्रेक्ट नहीं हैं, अर्थात् देश की जीडीपी में उनकी हिस्सेदारी का कोई हिसाब नहीं है।

एक अन्य रिपोर्ट के अनुसार भारत में 48 फीसदी महिलाएं स्वरोजगार किसान हैं और डेयरी उद्योग में लगभग 75 लाख महिलाएं काम कर रही हैं। साल 2001 में, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला श्रम की भागीदारी दर 30.79 प्रतिशत थी वहीं शहरी क्षेत्रों में 11.88 प्रतिशत थी। वर्तमान में निजी क्षेत्र कंपनियों में कुल वर्कफोर्स की 24.5 फीसदी भागीदारी महिलाओं की है। सार्वजानिक क्षेत्र की कम्पनियों में महिलाओं की ये हिस्सेदारी तकरीबन 17.9 प्रतिशत है।

भूमि और संपत्ति संबंधी अधिकार के संदर्भ भारत का कानून किसी महिला को अपने पिता की पुश्तैनी संपत्ति में पूरा अधिकार देता है, अर्थात यदि पिता ने खुद जमा की संपत्ति की कोई वसीयत नहीं की है, तब उनकी मृत्यु के बाद संपत्ति में लड़की को भी उसके भाईयों और मां जितना ही हिस्सा मिलेगा। यहां तक कि शादी के बाद भी यह अधिकार बरकरार रहेगा। हालांकि अभी नवंबर 2015 में ही आए सर्वोच्च न्यायालय के फैसले ने पिता की संपत्ति में बेटियों के बराबर के अधिकार को सीमित कर दिया है। न्यायालय ने कहा है कि अगर पिता की मृत्यु 2005 में हिंदू उत्तराधिकार कानून में संशोधन से पहले हो चुकी है तो ऐसी स्थिति में बेटियों को संपत्ति में बराबर के अधिकार से वंचित रखा जाएगा। अदालत ने कहा कि हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 के संशोधित प्रावधान के एक सामाजिक विधान होने के बावजूद पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं हो सकता। बेटी को संपत्ति में बराबर का हिस्सेदार तभी माना जाएगा, जब पिता 9 सितंबर, 2005 को जीवित हों। दरअसल हिंदू उत्तराधिकार कानून 1956 में बेटी के लिए पिता की संपत्ति में किसी तरह के कानूनी अधिकार की बात नहीं कही गई थी, जबकि संयुक्त हिंदू परिवार होने की स्थिति में बेटी को जीविका की मांग करने का अधिकार दिया गया था। लेकिन 9 सितंबर, 2005 को हुए संशोधन के बाद पिता की संपत्ति में बेटी को भी बेटे के बराबर अधिकार दिया गया था।

संपत्ति और अधिकार संबंधी मामलों में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के कुछ अन्य फैसले भी उल्लेखनीय हैं:–

1986 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने एक वृद्ध और तलाकशुदा मुस्लिम महिला शाहबानो के हक में फैसला सुनाते हुए कहा कि उन्हें गुजारा भत्ता मिलना चाहिए। हालांकि कट्टरपंथी मुस्लिम नेताओं ने इस फैसले का जोर–शोर से विरोध किया और उन्होंने यह आरोप लगाया कि अदालत उनके निजी कानून में हस्तक्षेप कर रही है। बाद में केंद्र सरकार ने मुस्लिम महिला (तलाक संबंधी अधिकारों की सुरक्षा) अधिनियम को पारित किया।

इसी तरह ईसाई महिलाओं ने तलाक और उत्तराधिकार के समान अधिकारों के लिए वर्षों तक संघर्ष किया है। 1994 में सभी गिरिजाघरों ने महिला संगठनों के साथ संयुक्त रूप से एक कानून का मसौदा तैयार किया जिसे ईसाई विवाह और वैवाहिक समस्याओं का कानून कहा गया। हालांकि सरकार ने प्रासंगिक कानूनों में अभी तक कोई संशोधन नहीं किया।

निष्कर्ष स्वरूप कहा जाए तो समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार लाए जाने के लिए अभी भी अनेक प्रयास करने की आवश्यकता है। शिक्षा और स्वास्थ्य के मामले में केरल जैसे कुछ राज्यों और अपवादों को छोड़ दिया जाए तो महिलाओं की स्थिति निराशाजनक ही बनी हुई है। आर्थिक क्षेत्र में महिलाएं अभी भी आत्मनिर्भर नहीं हो सकी हैं। इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि सरकार के तमाम प्रयासों ने महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति को पहले से बहुत बेहतर स्थिति में पहुंचाया है लेकिन अब नए–नए कानून बनाने से अधिक यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि कैसे उपलब्ध कानूनों का सही क्रियान्वयन किया जाए ताकि अपने संवैधानिक अधिकारों का लाभ शहरों में रह रही उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं के साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों की वह महिलाएं भी उठा सकें जो संविधान द्वारा प्रदान किए गए मौलिक अधिकारों से भी वंचित हैं।

(लेखिका टी वी चैनल ज़ी न्यूज से जुड़ी हुई हैं)
ई–मेल : pashyantizeenews@gmail.com

वन स्टॉप सेंटर स्कीम

—विनीत तिवारी

16 दिसंबर, 2012 को दिल्ली में घटित एक दर्दनाक कुकृत्य से उपजे जनदबाव ने महिला हिंसा कानून, नीति और योजनाओं में कई संवेदनशील बदलाव कराए। क्रियान्वयन धनराशि की व्यवस्था हेतु केन्द्र सरकार ने वित्त मामलों के विभाग के अधीन 'निर्भया कोष' की स्थापना की। विभाग द्वारा 2013–14 से 2015–16 के तीन वर्षों में 3,000 करोड़ की धनराशि इसमें जमा की गई। निर्भया कोष के उपयोग, निगरानी तथा समीक्षा हेतु केन्द्र सरकार ने महिला एवं बाल विकास मंत्रालय को नोडल मंत्रालय बनाया। निर्भया कोष के तहत् फिलहाल गृह मंत्रालय द्वारा गठित केन्द्रीय पीड़िता मुआवजा कोष, सड़क, यातायात एवं राजमार्ग मंत्रालय की 'सार्वजनिक वाहन नारी सुरक्षा परियोजना' के अलावा महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की दो योजना/परियोजना अस्तित्व में आईं हैं: पहली, महिला सहायता हेतु टेलीफोन हेल्पलाइन सेवा को पूरे देश में सुलभ बनाना तथा दूसरी,'वन स्टॉप सेंटर स्कीम'।

एक परिचय

वन स्टॉप सेंटर (वस्से) यानी एक ही छत के नीचे 24 घंटे सहायता सेवा, बसेरा, पुलिस डेस्क, स्वास्थ्य एवं सलाहकार सेवाएं। 'वस्से' को आप नारी हिंसा के खिलाफ सभी उपायों व सुविधाओं को एक ही छत के नीचे मुहैया कराने का अड्डा कह सकते हैं।'वन स्टॉप सेंटर स्कीम' का उद्देश्य नारी के प्रति हिंसा की रोकथाम तथा पीड़ितों को संरक्षण व पुनर्वास मुहैया कराना है। ऊषा मेहरा आयोग ने योजना की आवश्यकता बताई। महिला सशक्तीकरण हेतु गठित 12वें योजना कार्यसमूह ने प्रायोगिक तौर पर 'वस्से' स्थापित करना तय किया। प्रथम चरण में प्रत्येक राज्य

में एक 'वस्से' की स्थापना की जानी है। इसके लिए वित्त वर्ष 2015–16 में निर्भया कोष से 18.58 करोड़ रुपये मंजूर किए गए हैं। वन स्टॉप सेंटर स्कीम, 100 फीसदी केन्द्र प्रायोजित योजना है। 'वस्से' हेतु राज्यों को वर्ष में दो किश्तों में धन जारी करने का प्रावधान है। जिला से लेकर केन्द्र तक हर स्तर पर सामाजिक अंकेक्षण तथा निगरानी व्यवस्था होगी।

पंचायती राज, आदिवासी, गृह, महिला एवं बाल विकास, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, कानून एवं न्याय तथा सड़क, यातायात और राजमार्ग मंत्रालय केन्द्रीय भूमिका में होंगे। राष्ट्रीय कानूनी सेवा प्राधिकरण, राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण मिशन, केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड, नेशनल बिल्डिंग कन्सट्रक्शन कार्पोरेशन, राज्य शासन तथा जिला प्रशासन के देशव्यापी ढांचे को आपस में हाथ मिलाकर इस योजना को अंजाम देना है। स्थानीय महिला एकांश, विश्वविद्यालयों के महिला अध्ययन केन्द्रों, नागरिक संगठनों तथा धार्मिक नेतृत्व को मददगार भूमिका में रखने का प्रावधान है। इंदिरा गांधी मैत्री समेत सभी सहयोगी योजना/उपयोजना को 'वन स्टॉप सेंटर स्कीम' से जोड़ा गया है। जिलाधीश/उपायुक्त की अध्यक्षता में गठित जिला समिति 'वस्से' का प्रबंधन देखेगी। समिति में अध्यक्ष के सिवा पुलिस अधीक्षक, जिला कानूनी सेवा प्राधिकरण का सचिव, बार काउंसिल का अध्यक्ष, मुख्य चिकित्सा अधिकारी, जिला कार्यक्रम अधिकारी, जिला पंचायत अधिकारी, एकीकृत आदिवासी विकास क्षेत्र परियोजना अधिकारी, नागरिक संगठनों से तीन सदस्य, जिनमें कम से कम दो महिलाएं तथा अन्य कोई जिन्हें समिति अध्यक्ष, सदस्य बनाना चाहे वे समिति के सदस्य हों, ऐसा प्रावधान है। सभी को अपनी–अपनी भूमिका निभानी है।

तेजाब जैसे खतरनाक तरल पदार्थ से आक्रमण तथा यौन हिंसा की पीड़िताओं को त्वरित प्राथमिक चिकित्सा व आगे के इलाज की मुफ्त सुविधा उपलब्ध कराने की भूमिका, मुख्यतः स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय को निभानी है। इसमें अस्पताल, क्लीनिक, एम्बुलेंस, डॉक्टरों की डायरेक्टरी तैयार करना, प्रभारी अधिकारी का संपर्क फोन व नोडल डॉक्टर–अस्पताल की जानकारी मुहैया कराना, उनकी कर्त्तव्य परायणता सुनिश्चित करना, कायदों को लागू कराना, इलाज से प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष संबद्ध कर्मियों को प्रशिक्षण देना तथा संवेदनशील बनाना शामिल है।

गृह मंत्रालय, पुलिस संबंधी तथा कानून एवं न्याय मंत्रालय, जिलावार समर्पित व संवेदनशील वकीलों, मुआवजा हेतु सर्वेयर व

सहयोगी कार्यकर्ताओं की सूची देगा। 'वस्से' को चलाने के लिए प्रबंधन, कानूनी सहायता, चिकित्सा सहायता, सलाह, सूचना प्रौद्योगिकी, सुरक्षा तथा अन्य जरूरी मानव शक्ति हेतु राज्य सरकार को बाहरी एजेंसी से भी व्यवस्था करने की छूट होगी।

'वस्से' कहां बनें? इस बाबत् ऊषा मेहरा आयोग ने 'वस्से' को प्राथमिक तौर पर अस्पतालों में स्थापित करने की सिफारिश की है। अस्पताल में न्यूनतम 132 वर्गमीटर स्थान मिले, यही प्राथमिकता हो। ऐसा संभव न होने पर जिला मुख्यालय में चिकित्सा सुविधा उपलब्धता के दो किलोमीटर के दायरा क्षेत्र में सरकारी व उप सरकारी संस्थान परिसर विकल्प हो सकते हैं। आवश्यकता के मुताबिक जगह न मिलने पर राज्य सरकार 300 वर्गमीटर क्षेत्रफल में 132 वर्गमीटर का इमारती निर्माण भी कर सकेगी। इसमें 20 केन्द्रों के लिए 7.54 करोड़ की राशि खर्च की जा सकेगी। पीड़ित बालिकाओं हेतु अलग से विशेष देखभाल व संरक्षण केन्द्र स्थापित किए जा सकेंगे। जरूरत आधारित 'वस्से' निर्माण की डिजाईन संबंधी जिम्मेदारी, नेशनल बिल्डिंग कन्सट्रक्शन कॉरपोरेशन 'एनबीसीसी' को दी गई है। राज्य सरकारें निर्माण हेतु 'एनबीसीसी' को भी अनुबंधित कर सकेंगी।

'वस्से' चिकित्सा सुविधा, एम्बुलेंस सुविधा, प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराने की सुविधा, अपराध विज्ञान प्रयोगशालाओं में जांच मदद, मनोवैज्ञानिक मदद व सलाह, कानूनी मदद व सलाह, वीडियो कांफ्रेंस, सीसीटीवी, कुछ समय तक रहने के लिए कपड़े, तेल–साबुन से लेकर रोजमर्रा के सामान तथा भोजन की व्यवस्था की सुविधाओं से लैस होंगे।

फिलहाल तय किया गया है कि बलात्कार की पीड़िता का मामला जब तक कोर्ट में एक शक्ल नहीं ले लेता, तब तक के लिए वे 'वस्से' में अस्थायी बसेरा व सुरक्षा पा सकेंगी। महिला अपनी आठ वर्ष की उम्र तक की बच्चियों के साथ उत्पीड़ित हुई हो, तो 'वस्से' में अधिकतम पांच दिन ही अस्थाई बसेरा का प्रावधान है; आगे केन्द्रीय प्रशासक के विवेक पर निर्भर करेगा। पीड़िता को लंबे समय तक रहने की जरूरत हुई, तो स्थायी बसेरों में भेजने की व्यवस्था करना 'वस्से' की जिम्मेदारी होगी। 'वस्से' को 100 नंबर 108 नंबर जैसी मददगार सेवाओं से जोड़े जाने की बात है।

एक प्रतिक्रिया

'वन स्टॉप सेंटर स्कीम' यानी 'वस्से' स्थापित करना योजना का एक अच्छा विचार है, किंतु क्या यह लिंग विभेद आधारित अपराधों की रोकथाम करने में कारगर होगी?

गौर कीजिए, लिंग विभेद आधारित हिंसा मुक्ति हेतु वर्ष 1993 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा जारी घोषणापत्र, लिंग विभेद आधारित हिंसा को परिभाषित करता है –''लिंग विभेद आधारित कोई भी गतिविधि, जिसका परिणाम किसी महिला की शारीरिक, मानसिक अथवा यौन शोषण अथवा क्षति के रूप में सामने आये। धमकी देना, दबाव डालना, उत्पीड़न करना और अन्य ऐसे सभी कदम, जिनसे महिला स्वतंत्रता बाधित होती हो, लिंग विभेद आधारित हिंसा है।'' बलात्कार, दहेज, एसिड जैसे नुकसानदेह पदार्थ से हमला, छेड़खानी, वेश्यावृत्ति हेतु बाध्य करना, शारीरिक उत्पीड़न, बालिकाओं का यौन शोषण, बाल विवाह, गर्भपात, सती प्रथा तथा सामाजिक जीवन में महिलाओं से असमानता के व्यवहार को भारत में ऐसी ही श्रेणी के अपराध में रखा गया है।

मेरा मानना है कि पीड़िता का इलाज तात्कालिक जरूरत है और अपराध की रोकथाम एक दूरगामी जरूरत। 'वस्से' की वर्तमान अवधारणा, पीड़िता को संरक्षण तथा पुनर्वास में तो मददगार हो सकती है, किंतु महिलाओं के प्रति हिंसात्मक अपराध में रोकथाम में अभी इनकी कोई महत्ता दिखाई नहीं देती। क्यों? क्योंकि सुविधा और ढांचागत व्यवस्था बढ़ाने से महिला हिंसा रोकथाम संभव नहीं; क्योंकि महिलाओं, नन्हीं–नन्हीं बालिकाओं के प्रति हिंसा में वृद्धि भौतिक ढांचागत अथवा व्यवस्थागत पतन का नहीं, अपितु यह हमारे चारित्रिक पतन्, सामाजिक टूटन, आधुनिक जीवनशैली, बढ़ते तनाव तथा घर–बाहर स्त्री–पुरुष के बदलते संबंध व बदलती भूमिका का प्रतिफल है।

गौर कीजिए कि न्याय प्रक्रिया में जटिलता व महंगा होता न्याय, सिर्फ एक सहायक कारण भर है। पीडितों को संरक्षण व पुनर्वास देकर हम उनके टूटे तन–मन पर मरहम लगा सकते हैं; न्याय पाने में थोड़ा–बहुत सक्षम बना सकते हैं, किंतु 'वस्से', अपराधियों के मन में अपराध के प्रति भय, घृणा उत्पन्न करने अथवा परिवारों की परिधि में घुसकर चारित्रिक उत्थान करने में सक्षम इकाई नहीं है। चरित्र सुधार, कारगर न्याय तथा व्यक्तिगत व साझी जवाबदेही का कोई विकल्प नहीं है। अर्थ अथवा भौतिक ढांचा आधारित कोई योजना/परियोजना इसका विकल्प नहीं हो सकती। बाल सुधार गृह और महिला संरक्षण आश्रमों में हिंसा व लिंग विभेद आधारित अत्याचारों की एक नहीं, अनेक घटनाएं इसकी पुख्ता प्रमाण हैं। असम, बिहार, आंध्र प्रदेश और दिल्ली में अन्य प्रदेशों की तुलना में यौन शोषण के मामले ज्यादा पाए गए हैं। ज्यादातर दर्ज मामलों में पास्को नहीं लगाया गया। कानून अच्छा है, लेकिन अमल और सजा की दर में भारी अंतर है। मात्र 2.4 प्रतिशत मामलों में ही अमल का आंकड़ा है। सोचिए कि यह क्यों है? बालिका जागरुकता सुनिश्चित किए बगैर 'वस्से,' भारत पर कहीं एक और भौतिक ढांचागत आर्थिक बोझ ही साबित न हो।

(सहायक, प्रोफेसर, बानस्थली विश्वविद्यालय, टोंक, राजस्थान)
ई–मेलः tvineet31@gmail.com

ग्रामीण महिलाओं को इंजीनियर बनाता एक कॉलेज

—जय श्रीवास्तव

भारत में शिक्षा को लेकर अक्सर यह बहस छिड़ी रहती है कि वह व्यवाहारिक और रोजगार दिलाने वाली नहीं है. लेकिन इसके उलट राजस्थान के एक गांव में एक ऐसा कॉलेज चल रहा है जो ग्रामीण महिलाओं को सोलर इंजीनियर बनाकर उनका सशक्तीकरण कर रहा है। यह कॉलेज डिग्री ही नहीं देता बल्कि महिलाओं को इस तरह योग्य बना देता है कि वे अपने पैरों पर खड़ी होकर अपने परिवार का पालन–पोषण कर सकें। यह कॉलेज है बेयरफुट कॉलेज। राजस्थान के अजमेर जिले के तिलोनिया गांव में 52 एकड़ में बना कॉलेज अपनी अनूठी शिक्षा के लिए भारत ही नहीं बल्कि दुनिया भर में मशहूर हो चला है।

यहां आसपास के गांव की दादी– नानी और घरेलू महिलाएं पढ़ाती हैं. इन्होंने खुद भी कभी इसी कॉलेज में ट्रेनिंग ली थी। अब यहां सोलर इंजीनियरिंग के साथ–साथ मशीनों, जन स्वास्थ्य और रेडियो जॉकी की ट्रेनिंग भी दी जाती है। बेयरफुट कॉलेज की स्थापना 1972 में संजीत बुनकर राय ने की थी। ग्रामीण महिलाओं की स्थिति सुधारने और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने का उनका प्रयास रंग लाया।

पास के गांव में रहने वाली मगन कंवर ने इसी कॉलेज में काम सीखा और अब यहीं मास्टर ट्रेनर हैं। पुराने दिनों को याद करते हुए मगन कंवर कहती हैं 'मैंने स्वेटर बनाना सीख कर कुछ करने की ठानी थी। हमेशा से ही खाना बनाने और बच्चों की जिम्मेदारी के अलावा भी कुछ करना चाहती थी। कॉलेज आने के बाद सोलर इंजीनियरिंग का काम सीखना शुरू किया और अब अपनी भूमिका से खुश हूं।'

कॉलेज में आने वाली बहुत–सी महिलाओं के पति शराब पीकर उनके साथ बुरा बर्ताव करते थे। लेकिन यहां आने के बाद वे आत्मनिर्भर बनी हैं। वो अब खुद के और अपने बच्चों के बेहतर भविष्य का सपना देख रही हैं। बेयरफुट कॉलेज में न सिर्फ राजस्थान बल्कि विदेशों से आई महिलाओं को भी ट्रेनिंग दी जाती है। यहां ट्रेनिंग ले रही तंजानिया की 47 वर्षीया मसांबा हामिज मकामी कहती हैं, 'मैं यहां से सोलर उपकरणों का काम सीख कर जाऊंगी और अपने गांव और घर में इसे लगाऊंगी। मसांबा की ही तरह विभिन्न देशों की 28 महिलाएं भारत सरकार की स्कॉलरशिप पर बेयरफुट कॉलेज में 6 माह का प्रशिक्षण ले रही हैं। बेयरफुट कॉलेज के संस्थापक राय को टाइम मैगजीन में उनके इस काम के लिए वर्ष 2010 में विश्व के 100 प्रभावशाली लोगों में शामिल किया गया था। कॉलेज से अब तक लगभग 10 हजार से अधिक महिलाएं प्रशिक्षण प्राप्त कर अपने पैरों पर खड़ी हो चुकी हैं।

कमला देवी जो अब सौर इंजीनियर हैं

राजस्थान के अजमेर जिले के तिहारी गांव की कमला देवी दिखने में किसी भी देहाती महिला से भिन्न नहीं। सिर पर पल्लू, नाक में बड़ी–सी नथ और हाथ–पांवों में चांदी के चमकते गहने। 23 वर्षीय कमला जब 12 वर्ष की आयु में अपने ससुराल सिरोंज गांव में आई तो उसने कभी स्कूल का मुंह भी नहीं देखा था। वह अपनी चारों बहनों की तरह ही बिल्कुल अनपढ़ थी। वह साधारण महिलाओं की तरह खाना बनाने या सिलाई–बुनाई की बातों की बजाए आपको बताएंगी कि किस प्रकार तारों, सर्किट चार्ज कंट्रोलर और पैनलों को जोड़कर सौर लालेटन बनाई जाती हैं। उनके द्वारा बनाए सौर लालटेन राजस्थान के गांवों के कई अंधेरे घरों और स्कूलों में प्रकाश फैला रहे हैं। कमला राजस्थान की पहली बेयरफुट महिला सौर इंजीनियर हैं। कमला की तरह देश के आठ राज्यों सिक्किम, आसाम, बिहार, राजस्थान, केरल, उत्तरांचल, हिमाचल प्रदेश और आंध्र प्रदेश के विभिन्न गांवों की महिलाएं तिलोनिया गांव के सोशल वर्कस रिसर्च सेंटर (एसडब्ल्यू आर सी) के बेयरफुट कालेज में प्रशिक्षण ले रही हैं। छह महीने के प्रशिक्षण के बाद ये महिलाएं सौर लैंप बनाने और उसकी मरम्मत करने में दक्ष हो जाती हैं। उसके बाद अधिकतर महिलाएं अपने क्षेत्र के गांवों में, जहां बिजली की कमी है या बिजली बिल्कुल नहीं होती, सौर ऊर्जा प्रणाली का इस्तेमाल करती हैं।

सफलता की कहानी

अंजनी ने लड़ी शौचालय बनवाने के लिए लड़ाई

—साधना यादव

हौंसले बुलंद हो और कुछ कर गुजरने का जज़्बा हो तो हर मंजिल आसान लगती है। कुछ ऐसे ही संकल्पों के साथ अंजनी मल्लाह ने धावक के रूप में एक के बाद एक मेडल जीते और अब महिलाओं को उनकी असल जिंदगी से वाकिफ करा रही हैं। उन्होंने अपने गांव में आंगनबाड़ी केंद्र सुसज्जित कराया। साथ ही प्राइमरी व इंटर स्कूल तक की नींव रखवाई। देश की सबसे बड़ी समस्या का भी मुकाबला किया और लोगों के बीच शौचालय बनवाने की लड़ाई लड़ी। इसी वजह से अब अंजनी मल्लाह सिर्फ धावक ही नहीं रह गई हैं बल्कि एक समाज सेविका के रूप में उन्हें उस तमाम सम्मान और पुरस्कार प्रदान किए जा रहे हैं।

अंजनी ने अपने नाम के अनुरूप एक के बाद एक उपलब्धियां हासिल की हैं। वह समाज की तमाम महिलाओं के लिए नज़ीर बन गई हैं। उनके खाते में कोई एक उपलब्धि नहीं है बल्कि वह लगातार एक के बाद एक कदम देश व समाज की तरक्की के लिए महिलाओं को जागरुक करने में लगी हैं। उन्होंने अपने गांव में आंगनबाड़ी केंद्र सुसज्जित कराया। साथ ही प्राइमरी व इंटर स्कूल तक की नींव रखवाई। देश की सबसे बड़ी समस्या का भी मुकाबला किया और लोगों के बीच शौचालय बनवाने की लड़ाई लड़ी। इसी वजह से अब अंजनी मल्लाह सिर्फ धावक ही नहीं रह गई हैं बल्कि एक समाजसेविका के रूप में उन्हें उस तमाम सम्मान और पुरस्कार प्रदान किए जा रहे हैं। पिछले दिनों समाचार–पत्र अमर उजाला की ओर से आयोजित रूपायन अचीवर अवार्ड से अंजनी को सम्मानित किया गया। यह सम्मान ओलंपिक पदक विजेता मैरी काम ने प्रदान किया।

अंजनी ने लड़ी शौचालय बनवाने के लिए लड़ाई

हौंसले बुलंद हो और कुछ कर गुजरने का जज़्बा हो तो हर मंजिल आसान लगती है। कुछ ऐसे ही संकल्पों के साथ अंजनी मल्लाह ने धावक के रूप में एक के बाद एक मेडल जीते और अब महिलाओं को उनकी असल जिंदगी से वाकिफ करा रही हैं। भारत की तेज धाविका बनने का सपना संजोने वाली अंजनी सन् 2014 में पूना में आयोजित इंटरनेशनल दौड़ प्रतियोगिता में शामिल हुईं। इन्होंने प्राइवेट बीए तक पढ़ाई कर गांव की कई लड़कियों को पढ़ना–लिखना और रुढ़ियों के खिलाफ खड़ा होना सिखाया। इनकी पहल पर गांव में गड़बड़झाला कर रही महिला प्रधान को सस्पेंड किया गया और गांव में स्कूल व शौचालय खुल रहे हैं। अंजनी मल्लाह न सिर्फ महिलाओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक कर रही हैं बल्कि समाज में सिर उठा कर जीने की कूबत पैदा कर रही है। यही वजह है कि आज अंजनी को उसके अपने गांव में ही नहीं बल्कि पूरे देश में वाहवाही मिल रही है। उसे तमाम पुरस्कारों एवं सम्मान से नवाजा जा रहा है। पिछले दिनों अंजनी मल्लाह को गरीब महिलाओं की शिक्षा–दीक्षा रोकने वाली रुढ़ियों के खिलाफ अभियान चलाने के लिए सम्मानित किया गया। अंजनी उन हाई फ्रोफाइल लोगों में भी शामिल नहीं हैं जिन्हें तमाम संसाधन और मार्गदर्शन विरासत में मिले होते हैं बल्कि अंजनी बहुत ही गरीब परिवार की ग्रामीण महिला हैं। लेकिन उन्होंने ग्राणीण परिवेश की उन बुराइयों को दूर करने का बीड़ा उठाया, जिसे वह खुद भोग रही थीं। अंजनी ने देखा कि ग्रामीण परिवेश में महिलाओं के लिए किस तरह की दिक्कतें हैं और इन दिक्कतों का

वास्तविक समाधान क्या है? फिर इसी समाधान को ध्यान में रखकर अभियान चलाया। अंजनी ने कोई एक अभियान नहीं चलाया बल्कि एक के बाद एक अभियान को अपनी रणनीति का हिस्सा बनाया। जैसे पहले स्वच्छता की अलख जगाने के लिए हर घर में शौचालय बनवाने की अपील की और फिर शिक्षा पर अपना काम फोकस किया। वुमैन अचीवर अवार्ड लेते वक्त अंजनी ने जब अपनी पीड़ा बताई तो वह काफी भावुक हो गई थी। अंजनी ने बताया कि ग्रामीण इलाके में शौचालय एक बड़ी समस्या थी क्योंकि पुरुष वर्ग तो दिन में दूरदराज शौच के लिए चला जाता था, लेकिन महिलाएं कहां जाएं। बचपन से देखती आ रही थी कि शौच जाने की मजबूरी की वजह से ही महिलाएं रात में ही उठ जाती थीं। और अगर उनका पेट खराब हो जाए और दिन में शौच जाना पड़े तो यह सबसे बड़ी समस्या थी। ऐसी स्थिति में उन्हें शाम होने का इंतजार करना पड़ता था। यह किसी बड़ी यातना से कम नहीं था। अंजनी ने बताया कि यह बात उन्हें बहुत सताती थी। क्योंकि शौच जाने का स्थान न मिलना, जिंदगी की सबसे बड़ी समस्या है। पुरुष प्रधान समाज को यह बड़ी समस्या नहीं दिख रही थी। एक तरफ पर्यावरण का सवाल था तो दूसरी तरफ यातना। दोनों लिहाज से घर में शौचालय होना जरूरी है। अंजनी बताती हैं कि जब वह दौड़ के लिए अभ्यास कर रही थी तो भोर में ही जाना पड़ता। इस दौरान एक तरफ लोगों को खुले में शौच करते जाते देखती तो दूसरी तरफ महिलाओं की परेशानी। इस दौरान उसने सोच लिया कि जो परेशानी बचपन से देखती आ रही हैं, उसे हर हाल में दूर करेंगी। बस मौके की तलाश में थीं आखिर इस समस्या का निराकरण कैसे कराया जाए। इसीलिए अपने पहले अभियान में हर घर में शौचालय बनवाने के लिए लोगों को प्रेरित करने का बीड़ा उठाया। हालांकि शुरुआती दौर में तमाम लोगों को उनका यह काम अच्छा नहीं लगा, लेकिन उन्होने इसकी परवार नहीं की। घर में शौचालय होने के फायदे समझाए। धीरे–धीरे उनका यह प्रयास रंग लाने लगा। महिलाएं ही नहीं पुरुषों को भी समझ में आया कि घर में शौचालय होना जरूरी है।

उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के छोटे से गांव रानीपुर में गरीब परिवार में जन्मी अंजनी मल्लाह की जिंदगी भी उन तमाम बच्चियों की तरह मुफलिसी में गुजरी, जो निम्न मध्यवर्गीय परिवार से ताल्लुख रखती हैं। अंजनी के पिता छोटे किसान थे। खेती के साथ मेहनत–मजदूरी से परिवार चलता। मुफलिसी में जी रही अंजनी ने गरीब परिवार के साथ आने वाली दिक्कतों को न सिर्फ महसूस किया था बल्कि भोगा भी था। खास बात यह थी कि गरीब परिवार की महिलाओं को किस तरह से प्रतिदिन जिंदगी की जद्दोजहद से गुजरना पड़ता था, इसे बहुत ही नजदीक से महसूस किया था। प्राइमरी स्कूल की पढ़ाई करने के बाद उसने ठान लिया कि वह कुछ ऐसा कर दिखाएंगी, जिससे पूरा समाज बालिकाओं को उच्च शिक्षा दिलाने के लिए आगे आएगा। इसी हौंसले के साथ उसने दौड़ में हिस्सा लेना शुरू किया। प्राइमरी के बाद मीडिल और फिर हाईस्कूल की कक्षा में वह अपने विद्यालय की सबसे तेज धावक रहीं। इसके बाद ब्लॉक स्तरीय प्रतियोगिताओं में हिस्सा लेने लगी। कुछ दिन बाद जिला और फिर मंडल–स्तरीय प्रतियोगिता में भी तेज धावक का खिताब जीता। भारत की तेज धाविका बनने का सपना संजोने वाली अंजनी सन् 2014 में पूना में आयोजित इंटरनेशनल दौड़ प्रतियोगिता में शामिल हुईं। दौड़ के साथ ही उन्होंने अपनी पढ़ाई भी जारी रखी। किसी तरह प्राइवेट स्नातक तक की पढ़ाई पूरी कर पाई। रानीपुर में स्वच्छता का अभियान चलाने के बाद उनका हौंसला बढ़ा। वह आसपास के गांवों में भी इस अभियान को चलाना चाहती थी, लेकिन तभी उनकी शादी हो गई। पड़ोसी जिले संत कबीर नगर में मेडरापार गांव ससुराल आने के बाद वह घर–परिवार की जिम्मेदारी उठाने में व्यस्त रही, लेकिन बचपन में उसने जो सपना संजोया था वह रह रहकर हिलोरें मारता रहा। आखिरकार उसने अपने पति से बात की कि वह महिलाओं के लिए कुछ करना चाहती हैं। पति हर संभव सहयोग देने के लिए तैयार हो गए। फिर क्या था अंजनी को तो जैसे–मांगी मुराद मिल गई हो। इसके बाद तो उसने परिवार के अन्य सदस्यों को भी राजी कर लिया और फिर निकल पड़ी अपने अभियान में। उसने अपने अभियान की शुरुआत पास–पड़ोस की महिलाओं से किया। उन्हें समझाया कि शिक्षा और शौचालय कितना जरूरी है। महिलाओं को पूरी तरह से प्रैक्टिकल अंदाज में समझाया। मसलन शादी कार्ड दिखाकर, चिट्ठियां दिखाकर बाताया कि पढ़ाई कितनी जरूरी है। पढ़ाई न होने की वजह से लोगों की गोपनीयता कैसे भंग होती है, इसका डर दिखाया। यह भी बताया कि शौचालय बनवाने में कितना पैसा खर्च होता है और शौचालय न होने से कितनी बड़ी परेशानी झेलनी पड़ती है। इसके बाद तो उसके आसपास की तमाम उम्रदराज महिलाएं भी पढ़ने के लिए राजी हो गईं। फिर उसने हर बच्ची को उच्च शिक्षा दिलाने का संकल्प दिलाया। इसके बाद उसने शौचालय के मुद्दे पर महिलाओं की लामबंदी शुरु की। अंजनी ने बताया कि शुरुआती दौर में उसने शौचालय न बनने से होने वाली बीमारियों का डर भी दिखाया। फिर भी तमाम लोग गांव में शौचालय बनवाने को जल्दी राजी नहीं होते थे। कोई पैसों का रोना होता तो कोई जगह का। कई बार ऐसा लगता है कि इन गांव वालों को शौचालय बनवाने के लिए राजी करना नामुमकिन है, लेकिन रात में सोचती कि किसी न किसी को तो यह काम करना होगा। इसी अवधारणा के साथ अगली सुबह फिर गांव की महिलाओं से बातचीत करने निकल पड़ी। अंजनी मल्लाह ने बताया कि उन्होंने

औरतों और लड़कियों को खुले में शौच करने के लिए जाने के दौरान होने वाली दिक्कतों को उदाहरण देकर समझाया। इससे तमाम महिलाएं उसके साथ हो गईं। फिर ग्राम पंचायत में स्वच्छता अभियान के तहत बनने वाले शौचालय में होने वाली गड़बड़ियों को उजागर किया। इसके लिए तमाम महिलाओं को साथ लेकर जिलाधिकारी कार्यालय पर धरना–प्रदर्शन किया और कहा कि स्वच्छता मिशन तो शुरू कर दिया गया है, लेकिन आज भी जगह–जगह गंदगी का अंबार लगा हुआ है। शौचालय बनवाए जा रहे हैं, लेकिन मानक के अनुरूप नहीं है। इस पर तत्कालीन जिलाधिकारी ने गंभीरता दिखाई और शौचालय मानक के अनुरूप बनने लगे। इससे उसका हौंसला बढ़ा और उसने साथ लामबंद होने वाली महिलाओं को भी नई ऊर्जा मिली। उन्हें लगा कि वे अपने हक की लड़ाई लड़ सकती हैं। अंजनी की इन्हीं तमाम खूबियों की वजह से उन्हें समाचार–पत्र अमर उजाला की ओर से आयोजित रूपायन अचीवर अवार्ड से सम्मानित किया गया। यह सम्मानं मुख्य अतिथि के रूप में पहुंची ओलंपिक पदक विजेता मैरी कॉम ने दिया।

ताउम्र दौड़ते रहने की ख्वाहिश

अंजनी बताती हैं कि जब उन्होंने हाईस्कूल में दौड़ प्रतियोगिता में हिस्सा लिया तो उन्हें समझाया गया कि दौड़ में अव्वल रहने पर पुलिस अथवा इससे जुड़ी कोई न कोई नौकरी आसानी से मिल जाएगी। फिर वह सीआरपीएफ में भर्ती होने का सपना देखने लगी। इसके लिए उसने अपनी दौड़ की प्रतिभा को हथियार बनाया। उसने सीआरपीएफ की भर्ती में हिस्सा भी लिया, लेकिन लंबाई कम होने की वजह से फाइनल में आउट हो गई। एक बार निराश जरूर हुई, लेकिन अगले ही पल सोचा– चलो, शायद उसकी जिंदगी में कुछ और ही लिखा है। इसी उद्देश्य के साथ उसने दौड़ में हिस्सा लेना जारी रखा। वर्ष 2011 में बस्ती के हरैया में मिनी मैराथन का आयोजन हुआ, इसमें 300 लड़कों में अकेली दौडने वाली लड़की अंजनी थीं। दौड़ी भी और जीती भी। 2014 में पुणे इंटरनेशनल गेम्स में भी उन्होंने अपनी काबिलियत को दिखाया। इलाहाबाद में आयोजित नेशनल मैराथन में 42 किलोमीटर की दौड़ में 13वां स्थान पाने वाली अंजनी ने रफ्तार को ही अपनी जिंदगी का मकसद बना लिया। अंजनी कहती हैं कि अब उनकी ख्वाहिश है कि ताउम्र दौड़ती रहे। यह दौड़ दूसरों की जिंदगी को खुशहाल बनाने की दिशा में होनी चाहिए।

कदम बढ़े तो फिर रुके नहीं

अंजनी भी तमाम उन महिलाओं में से एक थी, जो घर की ड्यूटो पार करने में संकोच करती हैं। मायके में चाहे जैसे रही, लेकिन जब ससुराल आई तो उन सभी रीति–रिवाज का पालन करना उसकी मजबूरी थी, लेकिन जब पति का सहयोग मिला तो उसके कदम आगे बढ़ने लगे। पहले पास–पड़ोस की महिलाओं को एकजुट किया। फिर ब्लॉक–स्तर पर शौचालन बनवाने और शौचालय निर्माण में होने वाली धांधली के विरोध में धरना दिया। तहसील पर अपनी मांग रखी। यहां से भी बात न बनी, तो जिलाधिकारी कार्यालय पर बैठ गईं। आखिर प्रयास सफल हुआ। गांव में शौचालय बनने लगे। अब स्थिति यह है कि गांव की महिलाओं को खुले में शौच नहीं जाना पड़ता है। इसी तरह उन्होंने करीब पचास महिलाओं के साथ भाजपा सांसद का घेराव किया। सांसद ने पूरा प्रकरण गंभीरतापूर्वक सुना और खुद गांव जाकर समस्या का निस्तारण कराने का भरोसा दिया। उन्होंने अंजनी का हौंसला बढ़ाया, कहा कि शौचालय की मांग जायज है, सरकार की मंशा है कि हर घर में शौचालय होना चाहिए।

अब शराबबंदी के खिलाफ अभियान

अंजनी कहती हैं कि जिस तरह से शौचालय न होना बड़ी समस्या है उससे भी बड़ी समस्या शराबखोरी है। शराब पीने की वजह से आए दिन लोगों के मरने तक की खबरें आ रही हैं। शराब पीने की वजह से तमाम परिवार उजड़ रहे हैं। ग्रामीण इलाके में कच्ची शराब भी बनती है और उसे पीने से लोगों के मरने से लेकर आंख की रोशनी तक जाने की सूचना मिलती रहती है। तमाम शराबी पति महिलाओं का शोषण करते हैं। एक तरह से शराब शोषण का हथियार बनी हुई है। इसके खिलाफ अभियान चलाने की तैयारी है। उन्होंने बताया कि शराबबंदी के लिए वह तमाम महिलाओं को अपने साथ एकजुट कर रही हैं। शराब बनने पर पूरी तरह से रोक लगे। यदि सरकार शराब का लाइसेंस देती है तो उसके ठेके गांव के बाहर हो। स्कूल–कालेज अथवा अन्य सार्वजनिक स्थानों के आसपास शराब की दुकान खुलने पर पूरी तरह से पाबंदी लगे।

सभी पढ़ें, आगे बढ़ें

अंजनी कहती हैं कि वह चाहती हैं कि उनके गांव जैसा ही पूरे देश के गांवों में हर परिवार के बीच शौचालय का निर्माण हो। बालकों के साथ ही बालिकाओं को भी उच्च शिक्षा दिलाई जाए। क्योंकि जब तक हमारे समाज की बच्चियां उच्च शिक्षित नहीं होगी तब तक समाज का पूर्ण विकास नहीं हो सकता है। इसलिए हर व्यक्ति को अपने परिवार की बालिकाओं को उच्च शिक्षा दिलाने का संकल्प लेना होगा। बदलते समय में बालकों के समान ही बालिकाओं के लिए भी सोच विकसित करनी होगी। जिस दिन यह हो जाएगा, उसी दिन से हमारा देश विकसित भारत बन जाएगा।

(ग्रामीण विकास, गृह विज्ञान सहित समसामयिक विषयों पर नियमित लेखन)

हमारे
बाल प्रकाशन

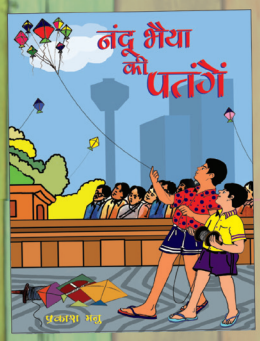

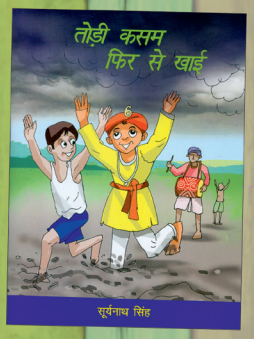

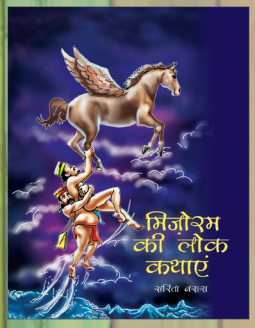

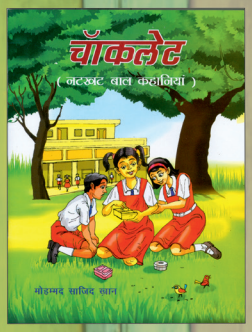

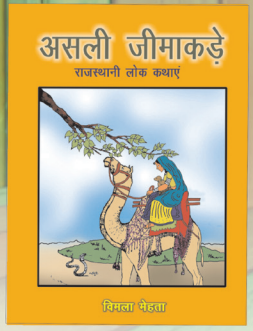

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

सी जी ओ काम्पलेक्स लोधी रोड, नई दिल्ली–110003

फोन– 011 24367260, 24365609

वेबसाइट : publicationsdivision.nic.in

www.facebook.com/publicationsdivision

ग्राहक बनने के लिए व्यापार शाखा से सम्पर्क करें

011-24365609 or e-mail: dpd@sb.nic.in, businesswng@gmail.com

आर. एन. आई./708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05/3164/2015–17
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–54/2015–17
1 जनवरी 2016 को प्रकाशित एवं 5–6 जनवरी 2016 को डाक द्वारा जारी

R.N.I./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2015-17
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-54/2015-17
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : डॉ. साधना राउत, अपर महानिदेशक एवं प्रभारी, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू–30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया–II, नई दिल्ली–110020, वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना